* वन्दे वीरम् *

परस्त्री व्यसन निषेधात्मक कथा।
अर्थात्
संक्षिप्त जैन रामायण।

दोहा।

श्री त्रसला नंदन प्रणमि, कोमल कमल समान।
मन वच तन प्रणमन करत निज हित हेत पिछान ॥ १ ॥
कहियत परनारी तनो, व्यसन महा दुखदाय।
सुनत बढ़त संवेगता, भवि मनको हितदाय ॥ २ ॥

अडिल्ल।

यह वर जंबू द्वीप महान सुक्षेत्र है। वसत सुंदराकार सुखन को हेत है ॥ जा में राक्षस द्वीप वसत अति सोहनो। तहां त्रिकूटाचल पर्वत जग मोहनो ॥ ३ ॥ ताके ऊपर लंका नाम पुरी वसे। स्वर्ग पुरी तें अधिक कछुक शोभा लसे ॥ ताको राजा रावण परजा पाल है। न्यायवन्त गुणवन्त प्रसन्न दयाल है ॥४॥ चक्र सुदर्शन महत रहत तां पासही। तीन खण्ड को धनी महान प्रकाश ही॥ बहुत भूप ता पास करत नित चाकरी। आनि प्रवर्ते दश दिश में शोभा धरी ॥५॥ महा तेज परकाशन दूजो भान है। लोक विदित अति शूरवीर परधान है ॥ कुम्भकरण को आदि विभीषण नाम जू। लघुभ्राता पर बड़े वीर अभिराम जू ॥ ६ ॥ सहस्र अठारह नारि कमोदनि बाग को। प्रफुलित करन निशाकर सुन्दर भाग को ॥ मन्दोदरी प्रसन्न बदन ताके घरें। सब रानिन की तिलक महा शोभा धरें॥ ॥ ताके सुत शुभ इन्द्रजीत घन नाद से। पिता समान पराक्रम सूरज चांद से ॥ इत्यादिक बहु पुण्य ठाठ ताके बनो। को कहि पावे पार कथन अतिही घनो ॥ ८॥

दोहा ।

आगे कथन सुन लीजिये, लंका रोदै मान ।
निवसत पुरी पताल में, सुन्दर सुख को धाम ॥ ९ ॥
खरदूषन ताको धनी, विद्याधर परचण्ड ।
सो रावण को भगनि पति, भोगे राज अखण्ड ॥ १० ॥
ऐसे राज समाज युत, रावण भोगे भोग ।
एक दिवस कैलास कों, गयो सुनो संयोग ॥ ११ ॥

सवैया ३१

ताही समै अनन्त वीर्य स्वामी को केवल ज्ञान भयो प्रगटाय मान आनन्द को थानजू । लोकालोक भासिवे को मिथ्यातम नासिवे को तत्व के प्रकाशिवे को सूरज समानजू ॥ तिनही के बन्दन को निज पाप खण्डन को कुगति विहंडन को आय गिर वानजू । जय जय कार होत सो आकाश में शब्द सुनि रावन हू शीघ्र इत आवत विमानजू ॥ १२ ॥

दोहा ।

तुरतहि उतरि विमान सो, प्रसरित अति द्युति गात ।
मुकुट धरैं बाजू धरैं, कुण्डल धरैं सुहात ॥ १३ ॥
वहु विद्याधर संघ तसु, परम हर्ष युत होय ।
दर्शन कीनो नाथ को, पातक दीनो खोय ॥ १४ ॥

चौपाई ।

पढ़न लगो स्तवन बनाय । नाना गद्य पद्य पद ल्याय ॥
अहो नाथ कीनो निज काज । अहो नाथ भव उदधि जहाज ॥१५॥
अहो नाथ एकाकी होय । जीत लिये तीनों भुवि लोय ॥
अहो नाथ नाथन के नाथ । तुमको जगत नवावत माथ ॥ १६ ॥
अहो नाथ गुण रत्न करण्ड । सुकुल ध्यान असि कर परचण्ड ।
कर्म प्रवल वैरिन के काज । सुकुल ध्यान धारो महाराज ॥१७॥

अहो नाथ केवल जिनराय । घाति कर्म क्षय करे बनाय ॥
अहो नाथ तुम वीर्य अनन्त । सार्थक नाम कहो भगवन्त ॥ १८ ॥
अहो नाथ मैं महा अनाथ । कीजे अब तिन नाथ सनाथ ।
अहो नाथ तुम कथन अपार । कहत इन्द्र नहिं पावत पार ॥ १९ ॥
हो सत चिदानन्द चिद्रूप । केवलाक्ष केवल सुख रूप ।
मैं मतिहीन मनुष पर्याय । कौन भांति बरणों गुण गाय ॥ २० ॥

दोहा ।

करि वन्दन इस भांति सो, स्तुति करि गुण गाय ।
दया सदन आनन्द मय, धर्म कह्यो मुनिराय ॥ २१ ॥

सवैया ३१

कहौ यत्था चार अरु श्रावकाचार कह्यो फेरि षट लेश्यान को भेद समझाय के । जीव औ अजीव भेद भिन्न भिन्न छहों द्रव्य कथन महान सारी सभा को रिझाय के ॥ सप्त तत्व पंच अस्ति काय को बखान वेस अवर पदार्थ नव भाषे हरषाय के । सुनिके कथन सारी सभाको आनन्द भयो निज निज शक्ति सम लियो व्रत भाय के ॥ २२ ॥

दोहा ।

कइ एक ने मुनि व्रत लियो, कई एक श्रावक होय ।
कोई बहु विधि आखड़ी, लेत भये भ्रम खोय ॥ २३ ॥
तब रावण प्रति यों कही, अहो दशानन भूप ।
कछु एक व्रत लीजे यहां, आतम को सुखरूप ॥ २४ ॥
सुनि दशास्य बोलो तहां, अहो गरीब निवाज ।
मोपर कछु व्रत करन की, शक्ति नहीं महराज ॥ २५ ॥
कैसे लीजे नेम व्रत, मोपर पले न कोय ।
मैं आशा फांसा फस्यो, यिह विधि पासौं मोय ॥ २६ ॥

चौपाई।

सुनि बोले मुनि परम दयाल। अहो दशानन सुभि वच हाल॥
नेम बिना जो नर पर्याय। पशु समान होत नर राय॥ २७॥
याते अणु व्रत कछु भी करै। तौ नर देह सफलता धरै॥
नेम धर्म युत जो कोई होय। स्वर्ग मुक्ति को दाता सोय॥२८॥
बिना नेम दुर्गति कों जाय। ऐसे कहत भये मुनिराय।
तब दशास्य निज गर्ब वसाय। मुनि प्रति कहत भयो समझाय॥२९॥
स्वामी एक बरत मैं लियो। सभा माझ मैं सांच कहीयो।
जो परनार न इच्छे सोय। ताहि न इच्छों यह व्रत सोय॥३०॥
जो पर त्रिया रूप की खान। इन्द्रानी सम होय निदान।
विन इच्छे इच्छों नहिं ताहि। यहै प्रतिज्ञा मेरे आय॥ ३१॥
तब मुनि कही भली करु यही। तुमको सुख कारण है सही।
यह विधि धारि प्रतिज्ञा सोय। सुनि सब सभा अनंदित होय॥३२॥
करि प्रमाण मुनि कों सब कोय। अति आनंद हिये में सोय।
निज निज ग्रेह गये हरषाय। रावण भी लंका को जाय॥३३॥
राज्य करे अरु पाले नीति। जाके राज्य ईति ना भीति।
निःकंटक यह राज्य समाज। निर्भय करत आपनो राज॥३४॥
हाथ जोरि तब श्रेणिक राय। गणधर प्रति पूछे हरषाय।
अहो नाथ यह रावण वली। कही कथा ताकी तुम भली॥३५॥
कारण कवन पराई नारि। हरी पाप की बुद्धि विचारि।
गौतम कहैं सुनो मगधेश। तुम यह प्रश्न करी अति वेश॥ ३६॥
याको कथन सुनो चितलाय। भई कथा यह विधि सो आय।
सीता पत्नी रघुवर तनी। शील शिरोमणि अति रूपनी॥३७॥
रावण हरी पाप मति लाय। दंडक वन में घर ले जाय।
युद्ध मांहि जीती नहिं गई। छवि लखि यह दुर्मति निर्मई॥३८॥

पुनि श्रेणिक पूंछे शिर नाय। भो गणनायक सब सुखदाय।
राम कौन कारण को पाय। दंडक वन पहुंचे गणराय ॥ ३९ ॥
सिया अकेली कैसे भई। सो कारण कहिये गुणमई।
तब गणधर बोले सुखदाय। याको कथन सुनो चितलाय ॥ ४० ॥
यह सो भारत क्षेत्र मझार। कौशल देश महा सुखकार।
बसत अयोध्या पुरी विशाल। दशरथ नाम तहां भूपाल ॥ ४१ ॥
रानी जाके चार प्रधान। शीलवंत गुणवंत महान।
तिन युत राजा भोगत भोग। पूरव पुण्य तनो संयोग ॥ ४२ ॥

सोरठा।

कौशिल्या भये राम, भये सुमित्रा के हरी।
भरत केकई धाम, अपराजित के शत्रुहन ॥ ४३ ॥
चारो सुत अभिराम, शस्त्र शास्त्र विद्या निपुण।
भये महा गुणधाम, मात पिता को सुखद सब ॥ ४४ ॥

दोहा।

अब यह कथा यहां रही, आगे सुनो बखान।
मिथिला नाम पुरी विषैं, जनक राय बुधवान ॥ ४५ ॥
तासु विदेहा नारि ने, जने सुता सुत दोय।
सुत को वैरी देव थो, आय हरयो तिहि सोय ॥ ४६ ॥
छांड़ि दियो विजयार्द्ध पर, मन में दया कराय।
शशि गति तब खग लख लियो, लीनो तुरत उठाय ॥ ४७ ॥
सो निज वामा को दियो, रथनूपुर ले जाय।
जन्म महोत्सव तिन कियो, आनँद तूर बजाय ॥ ४८ ॥
भामंडल लहि नाम तसु, बढ़त भयो गुण वृन्द।
यहां विदेहा सुत बिना, करत महा दुख वृन्द ॥ ४९ ॥

लोक कुटुम्बी सब तबै, ढूंढ फिरे चहुं ओर
सुतन लखो काहू दिशा, बैठि रहे मुख मोर ॥५०॥

धारि सनेह सुता विषै, कहिकै सीता नाम।
अति लडाइ पालत भई, जनक राय की बाम ॥५१॥

शशि की किरण समान सिय, बढ़त भई प्रति रोज।
विकसित दन्तावलि करी, सोहत बदन सरोज ॥५२॥

चौपाई।

अब यह कथा सुनो धर नेह। सीता जनक तनों सब येह॥
तबै मलेछन कियो दबाय। लूटन लगे देश अधिकाय ॥ ५३ ॥
तब लखि जनक पत्र भेजियो। सब व्योरा तामें लिख दियो।
गयो पत्र दशरथ के पास। बांचत ही क्षण लेत उसास ॥ ५४ ॥
तुरत टेरि मन्त्री सों कही। चलो सितावी अन्तर नही॥
इतने दशरथ भयो तय्यार। चतुर्भेद सेना ले लार ॥ ५५ ॥
सुनि पितु गमन पहोंचे राम। विनय-सहित कीनो परनाम॥
पूछत गमन तनो विरतंत। भेद बताय दियो सब तंत ॥ ५६ ॥
पितु आज्ञा लेके अभिराम। विनय सहित कीनो परनाम।
सानुज कमल बदन श्री राम। चले बहुत सेना ले ताम ॥ ५७ ॥
राघव शीघ्र पहोंचे आय। चित्त मांहि बहु कोप उपाय॥
करो युद्ध तिन अति अधिकाय। परदल दीनो तुरत भजाय ॥५८॥
निर्भय जनक कटक कों कियो। अभय दान दोउन को दियो॥
महा तेज युत दोऊ वीर। पुनि आये निज पितु के तीर ॥ ५९ ॥
लखि बलवंत सुतन कों राय। मन में भूप बहुत विहसाय॥
फूलि गये नैनायुग तास। कंज कली लखि भानु प्रकास ॥ ६० ॥

यहां जनक मनमें चिन्तियो। बड़ उपकार राम ने कियो॥
प्रति उपकार बनत कछु नाहि। सीता दीजे तिन्हें बिवाहि॥६१॥
यह बिधि सोचि बुलायो विप्र। पुरी अयोध्या भेजो क्षिप्र॥
तिलक चढ़ाय दियो तिन जाय। रामचन्द्र कों अति हरषाय॥॥६२॥

दोहा।

दशरथ नन्दन तिलक में, अति उत्सव तिन कीन।
मोपर कहत बने नहीं, मेरी मति अति हीन॥६३॥
यह सब कथन यहां रहो, नारद सुनि यह बात।
सीता को देखन चलो, चित में बहु हरषात॥६४॥
सीता धाम तुरन्त ही, नारद पहुंचो जाय।
सिय सन्मुख ठाड़ो भयो, सो डरपी अधिकाय॥६५॥
करत रुदन भाजी सिया, नारद पाछे धाय।
तब देखो सामंत ने, असि ले पहुंचो धाय॥६६॥
जो न भाजतो आज मैं, तो जाते मो प्रान।
इमि सोचत कैलाश पर, पहुंचो अति खिसियान॥६७॥
तहां बैठि सो थिर भयो, पुनि क्रोधित मन होय।
लिखो पट्ट सीता तनो, अद्भुत रूप सँजोय॥६८॥
ले पट रथनूपूर गयो भामण्डल लखि जाय।
परो मूरछा खाय तब, सुधि न रही कछु ताहि॥६९॥
जगो देर कर तब कहीं, जाको पट यह होय।
ताहि विवाहूं तो जिऊं, और बात नहिं कोय॥७०॥
सुनि शशि गति दुचितो भयो, पूछी ऋषि सों बात।
हमें बतावो कौनको, यह पट है विख्यात॥७१॥

सुनि खगेस सांची कहो, नृपति जनक शुभ भेष।
ताकी प्यारी सुता को, यह पट जानो वेश॥७२॥

गीतका छन्द।

सुनि वचन नारद तने शशि गति हरष मन बोलो तबे।
कोइ जाय मिथिलापुर विषे नृप जनक को ल्यावे अबे॥
सुनि चन्द्रगति के वचन इक खग तुरत उठि चालो तहाँ।
करि रूप घोटक तनो सुन्दर जायके विचरो जहाँ॥७३॥
तब नगर माँही अति कुलाहल तुरंग कृत हूयो जहाँ।
सुनि नृपति कीनो आय बस तब चढ्यो तापर सो जहाँ॥
इत उते फेरत ही तुरंग उड़ि गगन मारग ले गयो।
निज थान पहुंचत वृक्षतर ह्वै निसरि तब आगे भयो॥७४॥
नृप रह्यो ताकी साखि गहि पुनि उतरि श्रीजिन भवन को।
लखि गयो तामें देखि जिन छवि पढ़त भयो स्तवन को॥
कर दरश परसन मुदित मन अति रह्यो ताकी थान ही।
मन रंगलाल निहाल हूवो जनक नृप बुधिवान ही॥७५॥
वह जाय खग नृप चन्द्रगति सों जनक को ब्योरो दियो।
महाराज नृप मिथिलेश कों मैं ल्याय मन्दिर मेलियो॥
सुनि चल्यो हरषित गात सेना साथ चतुरंगी लिये।
सब साज बाज समाज सेती बहुत बाजा बाजिये॥७६॥
तब पहूंचो आनि शशि गति धरे अति ही मौज कों।
लखि के कछुक मन में डरयो तब वह जनक खग की फौज कों॥
सो देखि जिन प्रतिबिम्ब सुन्दर करत दर्शन भाव सो।
मन जनक जानी जैन धर्मी निकट आयो चावसो॥७७॥

दोहा।

तब शशि गति बोलो महा, अहो वीर तुम कौन।
कहँते आये जाउ कहँ, हमें बतावो तौन ॥७८॥
वचन सुने यह नृपति के, अतिही मन हरषाय।
ज्यों को त्यों व्यौरा सकल, दीनो सकल सुनाय ॥७९॥
जानि जनक खग पति तुरत, करी प्रीति अधिकाय।
लेय गयो अपने सदन, विनय करी अधिकाय ॥८०॥
करि पाहुन गति वहुत सी, अति आदर करि राय।
जनक प्रतैं ऐसे कही, सुनो नृपति मन ल्याय ॥८१॥

गीतका छन्द।

तुम घरे सीता महा सुन्दर शीलवन्त महा सती।
हम सुनी परम प्रकाश वन्ती रमा रूप धरें अती॥
जानम न दूजी और कन्या देखि रूप लजे रती।
सो वरन लायक सुता हमरे दीजिये हे नरपती ॥८२॥

दोहा।

सुनि बोले मिथिलेश तव, सुता दई हम राम।
अति बलधारी जगत में, प्रगट राम को नाम ॥८३॥

अडिल्ल।

सुनि खगपति यह बात राम सुत कौन के।
कौन ग्राम को नाम राव किस भौन के॥
तब मिथिलेश सुनायो व्यौरा छोरसों।
सुनत बड़ाई यह विधि बोलो जोरसों ॥८४॥
कहा विचारे भूमि गोचरी रंक हैं।
पशु की नाँई विचरत महा अशंक हैं॥
हम विद्याधर गगन मांहि विचरत सदा।
देवन कैसे भोग भोगत हैं सदा ॥८५॥

सिया जनक इम बचन सुनत तब बोलियो।
ऐसे अविनय बचन न मुख सों खोलियो॥
भूमि गोचरी मांहि होत जिन देवजू।
चक्र वर्ति बलि आदिक सूरज तेजजू ॥८६॥
तिनकी निन्दा करत न आवत लाजजू।
यह विधि वैन न बोलो बड़ो अकाज जू॥
रघुवर सो परतापी दूजो है नहीं।
लक्ष्मण जाके भ्रात परम योधा सही ॥८७॥
सुने बचन नृप तने मनें तब चिन्तिके।
जनकै प्रति इमि बचन कह्यो मन गिन्तिके॥
मेरे घर द्वै धनुष चढ़ावे जो भिया।
और न जानों बात वरै सोई सिया ॥८८॥
सुनिके यह परमान करी मिथिलेश ने।
तब सब खग मन हरषित होत भये घने॥
करे साथ द्वै धनुष गगन चर भूरि के।
जनक राय युत चले सुःख अति पूरि के ॥८९॥
जनक पुरी में आय तुरत डेरा कियो।
जनक स्वयम्वर सिया तनो तब पूरियो॥
आये नृपति अनेक गिनति किमि कीजिये।
राम लखन द्वै पहुंचे आनन्द भीजिये ॥९०॥
तब वे धनुष महान धरे नृप ल्याय के।
अरु यह वात सबन सों कही समझाय के॥
जो नृप चाप चढ़ावे सो सीता वरे।
जापर चढ़े न चाप जाय अपने घरे ॥९१॥

इमि सुनि नृप के वचन सबै राजा जहां ।
उद्यत धनुष चढ़ावन को हूवे तहां ॥
जाय धनुष के पास महा ज्वाला धरें ।
पास गयो नहिं जाय कौन जाको धरें ॥८२॥
इमि सब हारे राय बहुत सो नीसरे ।
बहुत मूरछा खाय उलट धरनी परे ॥
बहुत तक अगिन विचार पास तक ना गये ।
बहुतक जीवन की दुविधा लखते भये ॥८३॥
महा चण्ड पर चण्ड हुते मानी जिते ।
हम नहिं जानत मान गयो तिनको किते ॥
देखे निरमद होय गये नृप हेरि के ।
राम लखन दोऊ भ्रात उठे दृग फेरि के ॥८४॥
तुरत चढ़ायो धनुष करी टंकोर ही ।
बधरी कृत दश दिशा भयो अति शोर ही ॥
जय जय शब्द कुलाहल हूवो ता घरी ।
जनक देखि बल रघुवर को पायो रली ॥८५॥
रचि मण्डप परणाय राम को जानकी ।
करो महोत्सव भारी करि विधि दान की ॥
विदा भये सब लोक गये निज धाम को ।
बहुत दान सन्मान देय पुनि दान को ॥८६॥
पाय दान सन्मान सिया को राम जू ।
पहुंचे नगर अयोध्या आनँद धामजू ॥
तायुत भोगत भोग कौन वरनी करे ।
पार न पावत कहत सहस जिव्हा धरे ॥८७॥

दोहा।

राम सिया युत व्हाँ रमैं, आगे सुनो बखान।
तब भामण्डल देर लखि, चलो साचि निज जान ॥९८॥

चौपाई।

चलत चलत पहुंचो सो तहां। है विराधपुर नगरी जहां॥
देखि नगर सुधि आई हाल। जातिस्मरण भयो तत्काल ॥९९॥
यह पूरब भव मोपुर लोय। कुंडल मंडित मैं नृप सोय॥
यह विचारि पुर उलटो गयो। रथनूपुर को पहुंचत भयो ॥१००॥
खाय मूरछा भूपर परो। कर उपचार सचेत सो करो॥
पूछत सबै लोक पुनि आय। कहत भामण्डल तिन्हैं सुनाय॥१०१॥
देखो यह संसार असार। दुःख को भरो महा भण्डार॥
मैं भ्राता सिय भगिनी सोय। जन्मे युगल आय मृत लोय ॥१०२॥
मो पितु जनक विदेहा माय। पूरब वैर हरो सुर आय॥
तुम पायो पालो सो आय। दई पूर्व भव कथा सुनाय ॥१०३॥
सुनि खगेश आनन्दित भयो। शशिगति तब वैरागी भयो॥
कथन भयो पूरन यह आय। अब सब कथा अयोध्या जाय॥१०४॥
दशरथ राय महा बलवन्त। भोगत भोग इन्द्र वत सन्त॥
एक दिवस बैठे दरबार। मंत्री सुभटन सहित बिचार ॥१०५॥
दर्पण में मुख देखत जाय। स्वेत केश इक लखि शिर राय॥
तब मन माहिं विचार कराय। यमको दूत पहूंचो आय ॥१०६॥
अब तक भोग भोग से गात्र। तृप्त न भयो तहूं तुषमात्र॥
जरा रोग आयो मुझ अंग। अब कहा कहों वाहे मन रंग॥१०७॥

दोहा।

तब नृप मन में चिन्तियो, यह संसार असार।
ज्यों कदली के थम्भ में, कहूं न दीखत सार ॥१०८॥

छन्द जोगी रासा।

मोह जाल में पड़ो जीव यह नाना संकट पाये।
तात मात अरु बन्धु कुटुम्बी अपने काम न आये॥
मानि विषय सुख रह्यो लुभ्यानो भयो न मन को मानो।
पर परणति में लीन भयो नित निज परणति विसरानो॥१०८॥
नीठि नीठि संसार जलधि मधि नरभव पाय दुहेला।
तापर करत नहीं आतम हित करत विषय सुख मेला॥
डूबत छाँड़ि जहाज समुद बिच पाहन गहत गहेला।
सो महान मूरख में मुखिया काचे गुरु को चेला॥११०॥
धूलि भरे कंचन की झारी पग पियूष में धोवे।
मिलो भागसों आय नाग वर तापर इंधन ढोवे॥
काग उड़ावन कारन मूरख चिन्तामणि को खोवे।
त्यों दुःख करि पायो नर जामा वृथा प्रमत्त डुबोवे॥१११॥
घर आँगन तें खोद कल्पतरु आनि धतूर लगावे।
त्याग करत चिन्तामणि भोंको काँच खण्ड अपनावे॥
गिरिसम बेंच गयन्द सुभगकों खर पर चित्त चलावे।
पाय धरम लब्धि त्यागि शठ विषय भोग को ध्यावे॥११२॥
यह जीवन अँजुलि को जल त्यों घटत घटत घटि जाई।
बरत अचम्भ दिया परवत पर बुझत अचम्भ न भाई॥
परावर्त कीने बहुतेरे काल अनादि गमाई।
खोयो ज्ञान गांठि को सारो भूलि गई चतुराई॥११३॥
ज्यों नर मूरी खाय ठगन की तिनको कहो न डारे।
निश दिन साथ रहत तिनही के ज्ञान आपनो हारे॥
त्यों जिय मोह साथ लिपटानो नहिं निज रूप विचारे।
पराधीन ह्वै रंक भयो शठ पाप पोटरी धारे॥११४॥

कपि ज्यां सूठि न खोल सके निज पर वश होय दुखारी ।
गोह गढ़ाय रहे गुल कों जिमि टरे न कबहूं टारी ॥
धरी नलनि छांड़त शुक नाहीं परत पींजरे भारी ।
त्यों जिय भूलि रह्यो अपनो पद भयो सदा अविचारी ॥११५॥
सुत दारा की लगी रहत सुधि अपनी आप विसारी ।
यह तन यह धन यह गृह मेरो यह मेरी फुलवारी ॥
इमि ममत्व फँसरी में फँस कर दीन भयो अधिकारी ।
जन्मन मरण अनेकन कीने गिनत न गिनत सम्हारी ॥११६॥
सिंघ पाँय तर परो आय मृग को रक्षक ताकेरो ।
अंतक ग्रसित जीव को जैसे शरण न कोऊ हेरो ॥
यंत्र मंत्र तंत्रादिक औषधि कीनो जतन घनेरो ।
यातें अशरण कह्यो सकल जग कोऊन काहू केरो ॥११७॥
उतरत चढ़त चढ़त पुनि उतरत कपि थंभा पर जानो ।
उरझत खुलत खुलत पुनि उरझत गोरख धंधा जानो ॥
उगलित गिलित गिलित पुनि उगलित लूता तंत पिछानो ।
जन्मत मरत मरत पुनि जन्मत तिम जग जीव बखानो ॥११८॥
भूषण वसन असन अति मधुरे दे दे रोज लड़ायो ।
काल अनादि वस्यो जाके संग बहु विश्वास बढ़ायो ॥
सो शरीर दुरजन की नांई अन्त काम नहिं आयो ।
मैं विरथा ही या संग रहिके बहु संसार बढ़ायो ॥११९॥
कितनी वार नरक फिरि आयो गणत विना दुःख पायो ।
तिर्यंच होय सहे दुःख परवश अन्यो अन्य सतायो ॥
मनुष होय कछु धर्म न कीनो विरथा जन्म गमायो ।
देवयोनि में जन्म लियो तहां कछू न व्रत बनि आयो ॥१२०॥

इस संसार असार जानिके को पंडित पति आयो।
भर्म बुद्धि करि रह्यो लुभ्यानो किह विधि साता पायो॥
याते धर्म विषें बुधि धरिये यावत आयु न छीजे।
पीछे आय बने कछु नाहीं फिर पाछे कह कीजे॥२॥
है निज पास लखे वह औरे मृग कस्तूरी जैसो।
नीर समीप थंभ की छांहीं जलके बीच हलैसो॥
देह प्रमाण चेतना लक्षण जिय जैसे को तैसो।
देह प्रसंग पाय इसि चेतन नाम धरायो ऐसो॥२२॥
जन्मत साथ मरण नित लागो यौवन जरा सँघाती।
उपजत भरत भरत पुनि उपजत यथा वृक्ष की पाती॥
ऐसी रीति देख जग भीतर जे विरक्त धनि छाती।
ते ही तजि संसार भ्रमण वहु मोक्ष रमा सुख साती॥२३॥
गुरु कछु कह्यो करै कछु औरे अपनी बुद्धि समाती।
विकल भयो डोलत निशि वासर निज आतम गुण घाती॥
भोर भये पर गौरी गावत सांझि समय परभाती।
विकल भयो किरपान लिये कर काटत शिर पक्षपाती॥२४॥
कब धौं जाय दिगम्बर होवै कबधौं केशन लुंची।
कबधौं सकल अंगन के भूषण कबधौं वस्तर मुंची॥
कबधौं लेय कमंडल करमें भिक्षा मागन जैवे।
कबधौं राज सम्पदा त्यागव भिक्षुक नाम धरैवे॥२५॥
कबधौं जाय भुक्त की विरियां कर पातर कर औवे।
कबधौं लोभ पोटरी डारव कबधौं पाप नसैवे॥
कबधौं गृह कारागृह निवरी कबधौं होय खलासी।
कबधौं मान प्रध्वंसव देखव कबधौं होव उदासी॥२६॥

कबधौं पराधीनता छूटव कबधौं जरा उखासी।
कबधौं करव आत्म हित अ.पन कबधौं निज गुणपासी॥
कबधौं क्रोध पिशाच जान करि जलकी अँजुलि दैवे।
कबधौं अशुचि अपावन वपुसौं आपन बदला लैवे॥२७॥
कबधौं पुत्र मित्र धन वनिता छांड़ि दैव हरषाई।
कबधौं पांच वान के सायक निज भेदन नहिं आई॥
कबधौं काया वेली हेली बन में खोदव जाई।
कबधौं होय निराशा आशा पाशा तोरव पाई॥२८॥
कबधौं मन इन्द्री वश करवे कबधौं ध्यान लगैवे।
कबधौं अष्ट करम की रज करि आपन हाय उड़ैवे॥
कबधौं काल कलुषता भेटव भेटव शिव ठकुराई।
मनरंग लाल हृदे दशरथ के यह विधि बात समाई॥२९॥

दोहा।

तुरत बुलाय प्रधान को, कही बात समझाय।
राज देउ अब राम को, मैं मुनि होसी जाय॥ ३०॥
राज्य भिषेक तनो सबे, किये ठाठ तैयार।
तब वैरागी भरत हू, होत भये तत्कार॥३१॥
केकामति यह बात लखि, कीनो पश्चाताप।
अरु दशरथ वैराग सुनि, आई ततखिन आप॥३२॥
नमस्कार कर पीव को, अर्धासन बैठाय।
कहन लगी दुःख के बचन, मन गाँठी एँठाय॥३३॥
नाथ तिहारे साथ विन, तनक न मोहि करार।
ताते हमहू साथ तुम, चलसी तजि घर वार॥ ३४॥

दशरथ बोले हे प्रिये, बैठो तुम घर माहिं ।
पुत्र सहित सुख भोगवो, और बात कछु नाहिं ॥१३५॥
तब केका मति जानि के, भरत विराग अपार ।
कुटिल चित्त लागी कहन, सुनिये नाथ अवार ॥१३६॥

चौपाई ।

भो महाराज हमारी बात । सुनो चित्त दे करुणा गात ॥
जो पूरब वर दीनो राय । मोहि स्वयम्वर में हरषाय ॥१३७॥
सो वर अब प्रभु दीजे मोहि । यश प्रगटे अरु कीरति होय ।
दशरथ राय कही प्रिय मांग । जो इच्छा तेरे बड़ भाग ॥१३८॥
अश्रुपात युत तब केकई । दीन वचन सों कहती भई ।
मेरे तो इच्छा कछु नाहि । तुम प्रभु वचन वल्लभा आहि ॥१३९॥
पुनि नृप कहें सुनो प्रिय बैन । जो माँगो सो देशी चैन ॥
सुनि नृप वचन अधोमुख होय । लेइ उस्वांस कहत अब सोय ॥१४०॥
भरतैं राज्य देहु महाराज । तब यह मेरो कीजे काज ॥
सुनि नृप वज्रपात सी बात । तब कुम्हिलाय गयो सब गात ॥१४१॥
पुनि मन में सोचे नृप एम । यह तो बात बनत नहिं केम ॥
कैसे राम प्रतैं अब कहैं । भरत राज्य कैसे निरबहैं ॥१४२॥
ज्येष्ठ भ्रात आगे लघु भ्रात । क्यों कर राज्य करे अवदात ॥
जो नहिं करों भरत कों राय । वाढ़े अपयश अरु वर जाय ॥१४३॥
यह विधि सोच पिंड में परो । मन में राय कष्ट बहु धरो ॥
सोचे मनै मनै पछिताय । मुख मलीन तब पहुंचो राय ॥१४४॥
रघुनन्दन आये तिह घरी । पितु मलीन मुख तब उच्चरी ॥
अहो प्रधान तात क्यों दुखी । दीखि परत मो का नहिं सुखी ॥१४५॥
भेद कहो मोकों समझाय । सुनि मंत्री बोले शिर नाय ॥
जा कारण मलीन नर राय । सो कारण सुनिये चितलाय ॥१४६॥

पूरव बचन केकई काज। देन कही तो नृप तिह साज ॥
सो मागो राजा पर आय। ताको भेद सुनो रघुराय ॥१४६॥
भरत राय करिवे परकाश। यही केकई के मन आश ॥
इम सुनि नृप मन दुखिते होय। मन की बात कही नहिं कोय ॥१४८॥
तब ते मन मलीन ह्वै रहो। मौन पकरि कछु बचन न कहो ॥
श्री रघुचन्द्र सुनी यह बात। पितु के निकट गये हरषात ॥१४८॥
करि बहु विनय बचन उच्चरे। अहो तात काहे दुख भरे ॥
मोपर सोच कहो परकास। मैं तुम्हरो दासन को दास ॥१५०॥
तुम अपयश मों होते होय। तो मेरो जीवन धृक सोय।
तात बचन माने नहिं बाल। ताहि कालिमा लागे हाल ॥१५१॥
पुत्र सुपुत्र वहै परधान। तात कहै सो करे प्रमान ॥
यहै नीति मारग है देव। भरत राज्य दीजे प्रभु एव ॥१५२॥
इतने भरत सभा मधि आय। विरकित चित्त रघुवर भविभाय।
कही भरत प्रति लीजे राज। तात करै सो आतम काज ॥१५३॥
पितु जो कहै करै परमान। यहै बचन सोचे परधान।
रघुवर यह विधि वचन कहेय। भरत विरागी राज्य न लेय ॥१५४॥

सोरठा।

तब दशरथ सुत राम, करि सम्बोधन तासु कों।
नृपभिषेक अभिराम, कियो भरत कों सबन मिलि ॥१५५॥
राम तात नमि पांय, चलत भये लक्ष्मण सहित।
गये जानि सुत राय, परे सूरछा खाय तब ॥१५६॥
पुनि सचेत ह्वै राय, घर तजि बन में जाय के।
दीक्षा लइय सुभाव, धरो दिगम्बर रूप तब ॥१५७॥

पद्धड़ी छन्द।

बन गये तात को राम जान। लक्ष्मण सुत पहुंचे मात धाम ॥
नमि चरण कमल बहु हाथ जोरि। बोले रघुवर ऐसे बहोरि ॥१५८॥

हम छांड़ि देश परदेश जात। तुम सुखसों तिष्टौ यान मात ॥
कोउ दुख नहिं कीजे रंच मात। सब कुशल क्षेम रहिये सु गात ॥१५८॥
इम कहि चाले दोनों सुभाय। रघुवीर लछन सुन्दर सुभाय ॥
जानकी देखि रघुवर सु गवन। सो चली साथ तजि के सु भवन ॥१६०॥
रघु भ्रात सिया संयुक्त होय। नमि मात राम चाले जो सोय ॥
लखि नगर लोक व्याकुल महान। बहु साथ गये तिनके निदान ॥१६१॥
सब कहते बचन विलाप साथ। प्रभु कहां जात कीने अनाथ ॥
तुम बिन प्रभु दुख ही को पसार। चहुंधा दीखत हमको अवार ॥१६२॥
संबोधि सबन को राम राय। पठये सो घर को बोध लाय ॥
आपन आगे चाले सुजान। नाघत सरिता परवत महान ॥१६३॥
बिन राम लोक दीखैं उदास। तब भरत गये निज मात पास ॥
अति दुख करि बोले अहो मात। अब राम बिना कछु ना सुहात ॥१६४॥
उनको लावें तो बने बात। नहिं राज तजे हम विपिन जात ॥
केकई सुने ये बचन भाय। अति दुख सों भरि आई सो काय ॥१६५॥
हे पुत्र चलो रघुनाथ पास। उनको लावें पुनि निज निवास ॥
तब चले भरत मातै लिवाय। पहुंचे रघुवर के पास जाय ॥१६६॥
तब लखि के मातहिं राम राय। कीनो प्रणाम सांचे सुभाय ॥
लखि भरत राम के चरण दोय। करि नमन महा अति हरष होय ॥१६७॥
पुनि कुशल क्षेम पूछी बनाय। तब कहत केकई बच सुनाय ॥
हे पुत्र चलो अब घरै हाल। तुम बिन नगरी सब है विहाल ॥१६८॥
तब भरत गद गदे बचन होय। रघुवर सों विनती करत सोय ॥
हे महाराज आनंद निवास। हम पर किरपा कीजे प्रकास ॥१६९॥
घर चलो राज्य कीजे दयाल। हम सेवक आज्ञा धरें हाल ॥
अरु सुनो नाथ यह ठीक बात। भाषत हों तुम ढिंग हे सुगात ॥१७०॥

है महा निन्द्य नारी प्रजाय । कुटिलाई की सूरत बनाय ॥
यह करे प्रीति में भंग नाय। त्रिय जनको क्या विश्वास याय ॥१७१॥
तुम जानि केकई बचन नाथ । क्यों आये बन में भ्रात साथ ॥
ताते रघुनायक चलो ग्रेह । निज राज्य करो आनंद देय ॥१७२॥
हम आदि शत्रुहन करत सेव । यह मेरे मन अभिलाष देव ॥
सुन बचन भरत के राम राय। तब हर्षित चित हूवे सुभाय ॥१७३॥
हे वत्स तात के वचन जौन । पालत हैं जगमें धन्य तौन ॥
यह धर्म बड़ो संसार माय। जो पिता बचन पालत दृढ़ाय ॥१७४॥
याते अब कीजे राज्य थीर । ताते मति संशय धरो धीर ॥
पुनि हठ कर बोले भरत राय। बहु विनय सहित लागे सो पांय ॥१७५॥
प्रभु कृपा करो चालो स्वदेश । निज दास जान करिये अदेश ॥
अति हठ लखि रघुवर कहत वैन। सुन बचन भरत अब कहत यैन ॥१७६॥
मैं पिता बचन नहिं तज कदाच। जो कहो हमें परमान बाच ॥
दे दियो राज्य तुमकों नरेश । पालौ तजिके सारे कलेश ॥१७७॥
जब द्वादश वरषें बीत जाय । तव हम करसी यह राज आय ॥
यह सुन विलखित ह्वै भरत राय। मिलि चलो अयोध्यापुरी जाय॥१७८॥

दोहा ।

भरत गमन लखि रामजू, इम चिंतत मन माहिं ।
चले पंथ वनि है सही, विन चाले कछु नाहिं ॥१७९॥

छन्द ।

इम कहि तब राम विचारा । तब सीय सहित निरधारा ॥
उठि चाले दोनों भाई । विन संकेसे रघुराई ॥१८०॥
आगे आगे रघुवीरा । लीने शुभ धनुष सो तीरा ॥
ता पीछे सीता रानी । शोभा की परम निशानी ॥१८१॥

सीता के पाछे पाछे । हरि आप काछनी काछे ॥
जनु फटिक नील मणि वीका । अति दूर न निपट नजीका ॥१८२॥
सिय रूप रतन पुखराजा । ऐसो वनि रहो समाजा ॥
यह भांति कौसिला नंदा । युत हास्य विलास अमंदा ॥१८३॥
सो मन्द मन्द गति चाले । सिय हेत शीघ्र नहिं हाले ॥
चलि चित्रकूट के माहीं । पहुंचे कछु संशय नाहीं ॥१८४॥
तहँ जाय कियो विस्रामा । पुनि चाले तहँ ते रामा ॥
पहुंचे तब मालव देशा । कछु श्रम नहिं विगत कलेशा ॥१८५॥
ह्वां देखि अचंभा एका । उजरे पुर परे अनेका ॥
टूटे फाटे घर हाटा । चाले नहिं कोऊ वाटा ॥१८६॥
इक वृक्ष तनो लखि साखा । ता तरु करि वैठे भाखा ॥
लक्ष्मण सों कही पुकारी । चढ़ि वृक्ष लखो ततकारी ॥१८७॥
कोऊ आवत जात कि नाहीं । इम निश्चय करु मन माहीं ॥
सुनि आज्ञा रघुवर केरी । लक्ष्मण ले करी न देरी ॥१८८॥
चढ़ जात वृक्ष पर सोई । लखि दूर परो इक कोई ॥
आवत धावत घवराना । लक्ष्मण इम लखो निदाना ॥१८९॥
पुनि उतरि राम प्रति वोले । इक जन आवत शिर खोले ॥
इतनो सो पहुंचो आई । अति निकट रहो रघुराई ॥१९०॥
तूं कौन कहां ते आयो । सुनि बात तबे बतलायो ॥
इक वज्रकरण नर ईसा । सो धरमी विस्वा बीसा ॥१९१॥
ता पर सिंहोदर भूपा । चढ़ि आयो क्रोध संयूता ॥
चहुं ओर गांव घिरवायो । सब देश लूट करि खायो ॥१९२॥
सब लोक ठिकाने लागे । निज निज सुपते सब भागे ।
हम हूं यह काठ कठेरी । ले भागे करी न देरी ॥१९३॥

सुनि बात तबे रघुराई । दरदान मनै अधिकाई ॥
दीनो शुभ हार उतारो । अनमोलिक करुणा धारी ॥१९४॥
मुस्किकयाय कही अब जावो । जन्मान्तर लौ अब खावो ॥
ले हार मनै मुस्किक्याना । जिम पावत भूखो दाना ॥१९५॥

दोहा ।

पायो हार अमोल जिह, आनंद्यो मन मांहि ।
करि प्रणाम चलि दीन सो, आपन भाग सराहि ॥१९६॥
पुनि रघुवर लक्ष्मण प्रतै, कही बात समझाय ।
चलो शीघ्र तहां देखिये, पुर घेरो किन आय ॥१९७॥

चौपाई ।

तब दोउ धीर वीर गंभीर । परम पियारी सीता तीर ॥
चलत भये निःशांकित काय । चलत चलत पहुंचे रघुराय ॥१९८॥
प्रथम राम जिन मंदिर जाय । भगवत दर्श करे अधिकाय ॥
पढ़ि स्तवन नमे जिनराय । रोम रोम हरषे रघुराय ॥१९९॥
स्वर्ग समान देखि स्थान । तहां विराजे पुरुष-प्रधान ॥
असन हेत लक्ष्मण पुर गये । ह्वां देखे कपाट सब दये ॥२००॥
देख फिरे पुर चारो ओर । मारग लखो न काहू ठोर ॥
तहँ वह बज्रकरण अभिराम । बैठो हतो ऊचले धाम ।२०१।
तहँ ते देखि रूप हरि तनो । परम पुरुख कोई यह घनो ॥
नृप निज सेवक लियो बुलाय । भेजो सो तुरतै चलिजाय ।२०२।
लछन बुलाय साथ ले गयो । राजा देखि अनंदित भयो ॥
यह नर उत्तम श्यामल अंग । इम सोचो नृप तब मन रंग ।२०३।
सादर बैठायो नृप पास । प्रफुलित भये नयन युग तास ॥
संभाषण नाना विधि करी । कृपा कहां आपन विस्तरी ।२०४।

जो कछु आज्ञा करिये आज। सोई करां छाँडि सब काज।
तब लक्ष्मीश दियो सुसक्याय। संपूरण है सब नर राय।२०५।
मन में नृप विचारि ता घरी। वज्रकरण यह विधि उच्चरी।
आज कृपा जो मो पर होय। भोजन यहाँ करो भ्रम खोय।२०६।
सुनि उत्तर लक्ष्मण नहिं दियो। हियो पिछान राय को लियो।
व्यंजन बहुत भांति के ल्याय। नाना विधि के स्वाद बनाय।२०७।
कही यहां करिये परसाद। सुनि बोले लक्ष्मण अहलाद।
ज्येष्ठ भ्रात पुर बाहिर धाम। श्री जिनेन्द्र को है अभिराम।२०८।
तहां विराजत पत्नी साथ। उन बिन भोजन किह विधि आथ।
सुनि तब राय रतन मय थार। भरवाये नाना परकार।२०९।
साथ करे लक्ष्मण के राय। देखि प्रसन्न भये रघुराय।
राम निकट तब धरियो वीर। परम पियारी सीता तीर।२१०।
तब मुसक्याय वीर की ओर। आनंद उपजो अति घनघोर॥
करि शुभ अशन प्रसन्न सो भये। आनंद मान तहां ही रहे।२११।
मतो करो लक्ष्मण प्रति राम। यह जल्दी करिवे को काम॥
सिंहोदर को मान प्रहार। करो प्रध्वंस करो नहिं वार।२१२।
तुरत प्रमान करी तिह वार। तुरत चले नहिं लागी वार॥
निरभय सिंह समान अडोल। सिंह नाद करि आवत बोल।२१३।
पहुंचत ता सेना में जाय। लखि परदेशी उठो रिसाय॥
को हो कहां गांव कह ठाउं। हमें बतावो अपनो नाउं।२१४।
तिन प्रति लक्ष्मण दियो जवाब। हमें न रोको इम बतलाव॥
तब ले गये राय के पास। देखि राय तसु परम प्रकास।२१५।

साम्हे खड़ो नमे नहिं रंच। इतनो जानि भूप परपंच ॥
कहो कहां ते आये वीर। कौन काज आये मो तीर ।२१६।
मैं तो दूत भरत को सही। आप पास भेजो यह कही ॥
वज्रकरण सों कीजे संध। करो सही तजि के सब धंध ॥२१७॥

दोहा।

यह सुनि कोपो लछन प्रति, नयना लाल दिखाय।
अरे दूत समझो न तूं, विन समझे बतलाय ॥२१८॥
वज्रकरण को हूं धनी, मेरो दीनो खात।
मो ही सों प्रति वारता, गरभ भरी बतलात ॥२१९॥
तै भाषत यह विन समझ, रे रे दूत गवांर।
संधि नाम का सों कहत, हम नहिं सुनत लगार ॥२२०॥
उलटि जाउ तूं भरत पर, ये ही बात कहाय।
अपनो बैल कुठार सों, नाथेंगे हरषाय ॥२२१॥

चौपाई।

सुनि लछमन प्रति उत्तर देह। मानो बचन सत्य है येह ॥
विना संधि कीने नर राय। कुशल नाहिं जानो अधिकाय ॥२२२॥
सुने करेरे बचन भुपाल। अति क्रोधित बोलो ततकाल॥
है कोइ पुरुष निकारो याहि। है अति दुष्ट डरत है नाहि ॥२२३॥
सुनत प्रमाण उठे बर वीर। क्रोध सहित असि लीने तीर ॥
लखि लछमन ने आवत लोग। भलो बनायो विधि संयोग ॥२२४॥
तब गज बंधन तुरत उखारि। मारन लगे सम्हारि सम्हारि ॥
कोइ इक पटकि भूमि पर धरे। कोइ इक मारि अधमरे करे ॥२२५॥

केइ इक मार चपेटन मार । निज की तिन्हैं न रही सम्हार ॥
केइ इक भाजि दशो दिशि गये। यह विधि नृप नयनन लखिलये॥२२६॥
आपन चलन लगो सो धाय । लछमन लखि उछरो उमगाय ॥
पकरि मान विध्वंस करि तास । लेय चलो लछमन गुणवास॥२२७॥
श्री रघुचन्द्र पास ले साथ । यह सिंहोदर लीजे नाथ ॥
सीता कही देखि यह भेष । अति दृढ़ गहो न याके केश ॥२२८॥

दोहा।

लखि बैठायो राम ने, आपन पास बुलाय ।
दई दिलासा तासु कों, तुम मति डरपो राय ॥२२९॥
सुनि अंतेवर तब सकल, आयो रुदन करंत ।
नाथ भीख दीजे हमें, हे कृपालु जयवंत ॥२३०॥

छप्पय ।

तब दीनन के नाथ आपने मनहिं विचारी ।
वज्रकरण बुलवाय कही यह बात पुकारी ॥
तुम दोनो जन मिलो परस्पर कपट न राखो ।
अपनी सारी शल्य छांडि साचे बच भाखो ॥
यह भांति तिन्हैं समझाय करि, राम मिलाय दियो तहां ।
तब जगत कहत सांचे वचन, सत पुरुषन ढिग दुख कहां ॥२३१॥

दोहा।

राजपाट धन धान्य सब, देश गांव भण्डार ।
देइ बरोबर दोउन को, कीनो यह निरधार ॥२३२॥
राम दियो पायो दोउन, आधो आधो राज ।
महा अनंदित होत भे, निज निज पाय समाज ॥२३३॥

वज्रकरण अपनी सुता, अष्ट महा सुखदाय ।
लक्षमन कों व्याहीं सकल, हिरदे प्रीति बढ़ाय ॥२३४॥
सिंहोदर को आदि दे, औरौ नृप अभिराम ।
सबन दई निज निज सुता, अष्ट शतक सो धाम ॥२३५॥
पूरब पुण्य प्रभाव ते, जहां जाय तहां सिद्धि ।
आपुन सो आपुन मिले, जहां जाय तहां रिद्धि ॥२३६॥
सिया राम लक्ष्मन सहित, कछु दिन तहँ बिलवंत ।
पुनि जहँ की तहँ राखि सब, तीनो पे गुणवंत ॥२३७॥

चौपाई ।

आधी निशा बीति जब जाय । चले तहां ते अति हरषाय ॥
चलत चलत पहुंचे दोउ धीर । बालखिल्य की नगरी तीर ॥२३८॥
सो नर रूप धरे विचरंत । नाम कल्याणमाल गुणवंत ॥
इन्हें देखि मन सोची सोय । महा पुरुष ये दोनो कोय ॥२३९॥
देखि परम सुख पायो अंग । सुनो कथा भाषे मनरंग ॥
श्यामल गात लखन को रूप । पीताम्बर पट धरे अनूप ॥२४०॥
दीरघ लघु न सम विस्तार । सङ्गोपाङ्ग वर्तुलाकार ॥
चितवन काम पंच के बान । ताकरि जा चित बिंधो निसान ॥२४१॥
सोचि मनै मन करत विचार । यह मेरो मन रंजन हार ॥
पुनि मन मांहि विचार करंत । इन्हें आपनो दुख दरसंत ॥२४२॥
साथ लिवाय गई एकंत । पटके सदन मांहि छविवंत ॥
करे विसर्जन निकटी लोक । इकलो रहो चार को थोक ॥२४३॥
तब नृप रूप तनो शृंगार । धरो तहां पर तुरत उतार ॥
सविनय सहित विचार विचार । कन्या बनी सुन्दराकार ॥२४४॥

बदन चन्द्रमा मृग से नैन । बिम्बोष्ठा अमृत से बैन ॥
अंग अंग में छयो अनंग । जहँ देखो तहँ सुखमा संग ॥२४५॥
कोमल सरस कुसुम ते घनी । चंपक बरण बरण सोहनी ॥
कर्णाभरण विभूषित भार । प्रगट भयो जाकरि उजियार ॥२४६॥
चितवन हसन बोल बतलाव । सब मर्याद लिये प्रस्ताव ॥
लखमन श्याम अभ्र पट पाय । संपा इव भाषित अधिकाय ॥२४७॥
नासा लोल कपोल मझार । सब शोभा की राखन हार ॥
ताहि देखि सुक बन में जाय । लज्जित ह्वै निवसे अधिकाय ॥२४८॥
तासों लगे मोतिया आय । रोम रोम हिर्दे हरषाय ॥
मिलन सहोदर आये तीर । बहुत दिनन के बिछुरे वीर ॥२४९॥
भृकुटी बांकी मदन पिनाक । जा आगे सुर तिया मनाक ॥
कंजवाली बिकसे रवि देखि । त्यों विकसी लक्ष्मण कों देखि ॥२५०॥
अति कृश उदर पयोधर पीन । सुष्ठु पुष्ठ अति घनो नवीन ॥
तासु भार बोझित सब अंग । त्रवलि खातिका अंग उपंग ॥२५१॥
भंग होन की शंका मानि । यह निश्चय अपने जिय जानि ॥
त्रवली रज्जू करि बांधियो । यह विधि तिन इन्साफ सो कियो ॥२५२॥
पहरि झीन पट परम विशाल । निरखि छवी रति होत निहाल ॥
लक्ष्मी नाथ मिलन को हाल । समुद छांडि आई ततकाल ॥२५३॥
सीता निकट बैठि सो गई । बैठत ही यह शोभा भई ॥
मनु लघु भगनी सिय की होय । सबै ख्याल खत सिय सम सोय ॥२५४॥
बैठत प्रेम मार की भरी । अपनी कथा सकल उच्चरी ॥
मो पितु पकरि सलेक्षन लिये । तब तिन कारागृह में किये ॥२५५॥

मैं ह्यां धारि नृपति को रूप । जब ते राज्य करत हे भूप ॥
अब सो दुःख बरोबर भयो । तव दर्शन ते आनंद लयो ॥२५६॥
सुनि लक्ष्मण चहुंधे यह बात । तुरतै फरकि उठो सब गात ॥
नयन ललाई भृकुटी वंक । होत भई क्षण माहिं निशंक ॥२५७॥
सुनि यह बात चले ततकाल । जहां मलेक्षन को दरवार ॥
तिन सों युद्ध कियो बहु भांति । मारि निकारे कीनो शांति ॥२५८॥
वालखिल्ल कारागृह माहिं । ताहि छुड़ायो संशय नाहिं ॥
ल्याय राज्य पर थापो आय । यह आनंद कहो नहिं जाय ॥२५६॥
नगर रतनकूवर को धनी । अपने मन में यह विधि गुनी ॥
मेरे ये सर्वस्व प्रधान । इन आगे दूसर को आन ॥२६०॥
मैं इनको दासन को दास । इन्हें राखिये अपने पास ॥
पुत्री रतन लछन को दई । बहुत विनय करि विनती ठई ॥२६१॥
भो महाराज हमारी लाज । राखि लई सब शारे काज ॥
इन्हैं आदि विनती बहु भाय । करत भयो राजा उमगाय ॥२६२॥

दोहा ।

तब कल्याणमाला लखन, पहरि लई गल माहि ।
ता शोभा अद्भुत महा, उपमा दीजे काहि ॥२६३॥
नई प्रीति दिन दिन मतै, मनरंग वाढन लाग ।
जापर राखत पीउ हित, ताको बड़ो सुहाग ॥२६४॥

चौपाई ।

रहे कछुक दिन ताके धाम । लक्ष्मण ता युत करत अराम ॥
इक दिन तीनो मतो विचारि । सीता राम लछन निरधार ॥२६५॥

चलिवे की ठानी मन माहिं। काहू सों बतलाई नाहिं॥
अर्द्ध रात्रि आई जब ठीक। तीनों चले लीक की लीक॥२६६॥
ग्रन्थ बढ़े ताकी भय भात। हम ह्यां कही बात की बात॥
पद्म पुराण विषें व्याख्यान। संपूरण जानो बुधिवान॥२६७॥
उलंघि लंघि परवत सरितान। रस्ता की भरी बारता जान॥
करत करत सीता प्रति याज। सिया भई प्यासी इक ठाम॥२६८॥
नाथ प्यास हमको अति जोर। जल नहिं दीखत काहू ठोर॥
पग भरि चलो न सो पर जात। इस प्रकार पति सों बतलात॥ २६८॥
सुनि सिय बात राम तब कही। यह पुर दीखि परत है सही॥
चलिये तनक दूर है गाम। जहँ जल मिले अमल अभिराम॥२७०॥
देइ दिलासा बहु बिधि ताहि। मंद मंद आये पुर माहिं॥
अरुण ग्राम ताको वर नाम। बहुत किसान बने बहु धाम॥२७१॥
ह्यां पर एक कपिल द्विज रहे। अग्निहोत्र कुल को निर वहे॥
घरनी जासु सुशर्मा नाम। सकल सुशीला छवि अभिराम॥२७२॥
द्विज खितहर खेती पर गयो। अपनो काज सम्हारत भयो॥
राम जाय उतरे ता ग्रेह। त्रिया देखि तव हर्षित होय॥२७३॥
मिष्ट महा अति शीतल नीर। तहां पियो सीता भरि तीर॥
पियत नीर साता उपजाय। तावत ब्राह्मण पहुंचो आय॥२७४॥
देखि ब्राह्मणी उत्तम लोग। सुन्दर बचन सुभग संयोग॥
अति आदर कीनो हरषाय। दियो स्थान तिष्टे रघुराय॥२७५॥
पाछे ते आयो द्विजराय। देखि सिया पर उठो रिसाय॥
ये परदेशी अनमिल लोग। पर घर माहिं कौन संयोग॥२७६॥

इन्हें थान काहे को दियो । महा कोप कामिनि पर कियो ॥
यह चेष्टा द्विज की जब होय। अति रिस भरो न समझै कोय ॥ ७९॥
तब लछमन मन समझो जोय । पकरि लयो द्विज कोपित होय ॥
ऊपर चरण तले कर शीस । उलटि घुमायो तब लक्ष्मीस ॥ ८०॥
श्री रघुनन्दन दियो छुड़ाय । अपने मन में दया उपाय ॥
सीता तब बोली हे कंत । यहां न रहो चलो एकंत ॥ ८१॥
कलह होय तहां रहिये नही । यह सांची जानों मन सही ॥
सीता तने वचन परमान । मानि उठे ते चले निदान ॥८०॥
ग्राम निकट इक वट लह लहो । ताको पंथ राम ने गहो ॥
पहुंचत वट को वृक्ष निहारि। अति कावा छाया तिह धारि ॥ ८१॥
ता तल जाय कियो विश्राम । ता तल बैठे तीन शु नाम ॥
तब यह वृक्ष तनो जो देव। देखि रिसानो तिन प्रति सब ॥८२॥
अति रिस भरो तासु के पास । तासों कही बात परकास ॥
सुनि कोपो यक्षन को राय । चलो सितावी कोप उपाय ॥८३॥
आवत निकट देखि शुभ रूप । मन में करत विचार अनूप ॥
ये को पुरुष कहां ते आय । रहे यहां अति आनंद पाय॥८४॥
तब निज अवधि थकी सब जानि। करत भये निश्चय मन आनि ॥
ये बलभद्र मुरारि महंत । महा पुरुष निवसत बलिवंत ॥ ८५॥
इम मन जानि रचो पुर भलो । इन्द्र नगर को मद दल मलो ॥
वन उपवन खाई अरु कोट । कूप तडाग वापिका जोट ८६॥
इन करि शोभा अति पुर तनी। कहि न जाय उपमा जो बनी ॥
शोभित श्री जिन भवन महान । तिन पर ध्वजा रही फहराय ॥८७॥

पूजन भजन नृत्य अरु गान। करन लगे भवि जीव महान ॥
सो शोभा मनरंग किमि कहै। अस को कवि अवनी पर रहै ॥२८८॥
ऊंचे महा नृपति के भौन। तिनकी शोभा वरणे कौन ॥
वरणत लगै बड़ी ता वार। अरु कछु बुद्धि न करत पसार ॥२८९॥
निज निज सदन माहिं सब लोग। करत परस्पर दम्पति भोग ॥
आनंद व्यापि रहो पुर माहिं। वह शोभा देखत दुख जाहिं ॥२९०॥
जागि उठे सोवत दोउ वीर। देखत भये नगर गम्भीर ॥
देखत वहुत अचंभित भये। भोगत भोग रोज नित नये ॥२९१॥
श्रेणिक कही राम इस भाय। रहे प्रभू आनंद उर छाय ॥
अब द्विज तनी सकल जो कथा। सो सों कहो भई विधि यथा ॥२९२॥
गण नायक वायक सुनि कान। सुन मगधाधिप द्विज व्याख्यान ॥
इक दिन गये वनान्तर सोय। काष्ट लेन कूं उद्यत होय ॥२९३॥
तव द्विज नगर देखि चौंधियो। मन में तव विचार तिन कियो।
अहो अपूरव नगर महान। यहँ ते आयो स्वर्ग समान ॥२९४॥
मैं ह्यां फिरो अनेकन वार। देखो नगर न एकौ वार ।
यह संशय मन मांहि करंत। तव यक्षणि सों प्रश्न करंत ॥२९५॥
कौन नगर यह मोसों कहो। सो मन को संशय सब दहो ।
यक्षणि कहे राम पुर नाम। राम वसत यामें अभिराम ॥२९६॥
या नगरी को नायक राम। दाता भोक्ता इन्द्र समान ।
द्विज सुनि करन लगो परवेश। दरवानिन नाहिं दियो प्रवेश ॥२९७॥
विन नवकार पढ़े मति जाउ। हमको हुकुम दियो नर राउ ।
जो नवकार पढ़े सो जाय। सुख पूर्वक कछु भेद न आय ॥२९८॥

सुनि द्विज बच तब लेत उसास। उलटि गयो मुनिवर के पास।
तिनि प्रति सुनि सिद्धान्त अनेक। श्रावक हूवो सहित विवेक ।२९९।
घर में आय कथन तब कियो। त्रिमनि को उमगायो हियो।
गई नाय युत मुनिवर पास। भई श्राविका चित्त हुलास ३००।
पुनि इक दिन दोऊ मतो कराय। चले रामपुर अति हरखाय।
पहुंचत जिन मंदिर में गयो। तहँ जिनेन्द्र को दर्शन भयो ।३०१।
करि दर्शन आनंदित होय। कहत अनंद समर्थ न कोय।
पुनि दोऊ चले राज दरबार। जाय सिताबी करत जुहार ।३०२।
द्विज लछमन को देखि तुरंत। कांपि उठो मन बच तन तंत॥
देखत लछन भगो ततकाल। दूरि गयो तब राम निहार ॥३०३॥
तुरत राम चर भेजो कोय। जाय लियायो द्विज कों सोय॥
श्री रघुचन्द्र दिलासा देय। बैठायो जा कौं युत नेय ॥३०४॥
दीनो दान मान सनमान। कीनो बहुत तासु को मान॥
होय अयाची निज घर गयो। तब द्विज मन विचारतो भयो ।३०५।
स्त्री प्रति बोलो यह भाय। सुनो वचन जो चित्त लगाय॥
तुम यह सम्पति विलसो घनी। मैं दीक्षा ले सौ दुख हनों ॥३०६॥

दोहा।

छांडि सकल घर बार द्विज, अति वैराग्य उपाय।
धरत दिगम्बर भेष शुभ, वन में मुनि ढिंग जाय॥ ३०७॥
ग्रेह नेह संदेह अरु, देह धनादिक धीर।
तणवत छांडे छिनक में, हूवो नगन शरीर॥ ३०८॥

यह चरित्र द्विजराज को, सुनत पढ़त जो कोय।
ताहि मिले संपति घनी, दिन दिन साता होय ॥३०८॥

चौपाई।

ये ते पूरण चातुर्मास। जात राम सीता प्रति भास॥
यां ते चलो और ही देस। कछु दिन करो तहां ही वेस ॥३१०॥
चलत वार आयो वह देव। करत विनय मन वच तन एव॥
स्वयंप्रभा नामा वह हार। रघुवर को दीनो ततकार ॥३११॥
लक्ष्मण को कुंडल युग सार। सिया शीस चूड़ामणि हार॥
वीणा एक अमौलिक दई। श्री रघुचन्द्र हर्ष करि लई ॥३१२॥
सुर सों विदा होत गुणवंत। चले तहां ते तीन तुरंत॥
वीणा सुभग बजावत जाय। सिया सहित बहु विधि हरषाय ॥३१३॥
मोहत मन नर नारिन तने। जहां जाय तहां आनंद घने॥
पहुंचत विजय नगर के तीर। उत्तर दिशि में गुण गंभीर॥३१४॥
ता में जाय रहे रघुनाथ। गावत श्रीजिनेन्द्र गुण गाथ॥
तहँ इक कथा सुनो जो भई। नगर तनो राजा गुण मई ॥३१५॥
पृथ्वीधर जा नाम विशाल। बहु अवनीश नवावत भाल॥
इन्द्राणी त्रिय तसु गुण भरी। गुणमाला ताके अवतरी ॥३१६॥
जनु इंदरा कंज को वास। छांडि रही अवनीश अवास॥
अंवक श्रुत सोमा लों जास। त्रिवलि रूप कीने परकास ॥३१७॥
अंग अंग की शोभा जौन। वरणि सके अस है कवि कौन॥
सकल अंग सुखमा को वास। कहत न सों मति करै प्रकाश॥३१८॥
इक दिन राय निमित्ती पाय। तासों कहे बचन हित ल्याय॥
कहो निमित्ती पूछों तोहि। मो कन्या को वर किम होय ॥३१९॥
सुनि नृप वचन निमित्ती सोय। कहन लगो आनंदित होय॥
नृप तुम सुनो अयोध्यापुरी। जा आगे सुर पुर दुति हरी॥३२०॥

राजा दशरथ अवनि विख्यात। ता सुत लक्ष्मण बल अवदात॥
सो इस कन्या को वर होय। सुनि नृप वच हरखानो सोय॥३२१॥
कन्या हू सुनि के यह बात। जो सुख भयो कहो नहिं जात॥
फूलि गयो दुगुनो मुख कंज। सुनत भयो विकलय को भंज॥३२२॥

दोहा।

पुनि कछु दिन पाछे नृपति, सुनी और की और।
भरत राज्य नृप यति भये, राम तजो निज ठौर॥३२३॥
लक्ष्मण युत परदेश को, गमन करि गये आप।
सुनि राजा यह बात तब, कीनो पश्चाताप॥३२४॥
रे विधि तैं नीचो पुरुष, करत नीचली बात।
ऊंच नीच समझे विना, करत फिरत विख्यात॥३२५॥
यह विधि विधि सों, दुर्वचन, कहि समझो मन राय।
पुत्री दीजे और कहँ, तब मो संशय जाय॥३२६॥
सुनि कन्या ये बचन तब, मन में सोच करंत।
विन लक्ष्मण यह दूसरो, और न मेरो कंत॥३२७॥
भोर मिले तो भली है, नहिं करिहों अपघात।
प्राण जाउ तो जाउ किन, यह सांची मो बात॥३२८॥
करिके सोच विचार मन, पितु पर आज्ञा लेय।
पहुंची वाही वन विषैं, मन में अति हर्षेय॥३२९॥
साथ सहेली सखी जन, संध्या समयो पाय।
गान करन लागी तबे, ताल मृदंग बजाय॥३३०॥

चौपाई।

यामिनि याम युगल जब जाय। सोय गये सब जन समुदाय॥
उठी इते उत लेत उसान। चित की वृत्ति लखे भगवान॥३३१॥

मंद मंद धरनी पग धरे । मति कोउ जानि परे मन डरे ॥
कछुक दूर डेरा तक जाय । मानो दामिनि सी दमकाय ॥३३२॥
जो पग धरे लछन कहि लेय । तब दूजर पग आगे देय ॥
इम लखि लछन अचंभो मान। यह कोउ नारि रूप की खान ॥३३३॥
किधौं रती रंभा को रूप । किधौं नागकन्या को रूप ॥
आकि शशिकला कलानिधि पाय । अवनी पर विचरत सो आय॥३३४॥
लछमन चाल ढाल पहिचान । निज मन में तब कीनो ध्यान ॥
भूय भुनानी भृगी समान। चकित जात यह कित भगवान॥३३५॥
अकी रिसानी रिस की भरी । दैव योग रूठी नीसरी ॥
निश्चय करन जात अपघात । लछन विचारी यह अवदात॥३३६॥
लखन उठे ताकी लख बात । वह आगे यह पाछे जात ॥
चलत चलत इक वृक्ष निहार । ता तल गई अकेली नार ॥३३७॥
लक्ष्मण छिपि ठाड़े ह्वे रहे । तब वनमाला इम वच कहे ॥
अहो वृक्ष के देव सुजान । मैं लक्ष्मण पर तजत पिरान ॥३३८॥
तुम विन साखी यहां न कोय। कासों कहों न दूजो कोय ॥
अरु इक बात हमारी और । सुनि लीजे मन धरि इक ठौर ॥३३९॥
जो कदाच इम पंथ मझार । दैव योग रामानुज सार ॥
आय नीसरे तब तुम बात। कहि दीजो तुम यह विख्यात॥३४०॥
इम भव मिलन न उनको योग ।.अब पूरव भव उन संयोग ॥
यह कहि करि फसरी दे मरी। हम साखी सब जानत खरी॥३४१॥
इतनी कहि पट आलो कियो । तुरत चलाय वृक्ष पर दियो ॥
बांधि गांठ पोढी करि जाहि । फसरी रूप बनाई ताहि ॥३४२॥
डारन लगी गले में सोय । विधि को लिखो न मेटे कोय ॥
बोल उठे लक्ष्मण ता घरी । फसरी मत दीजे सुंदरी ३४३॥

मैं लक्ष्मण रामानुज सही । दशरथ सुत कछु संशय नही ॥
क्यों अपघात करै है बाल । मैं ठाड़ो तो ढिग दर हाल ॥३४४॥
इम कहि ताहि निवारण कियो । प्राण बचाय तासु को लियो ॥
सुनि यह बात अचंभित होय। इत उत तुरत विलोकित सोय ॥३४५॥
देखै तो पुरुषा आकार । नीलांजन परवत उनहार ॥
पीत वस्त्र धारे शुभ अंग। जाकी छवि लखि लजत अनंग ॥३४६॥
निश्चय ताहि रमापति जानि । सब बातन को विकलप हानि ॥
अद्भुत छवि लखि विह्वल भई । फसरी डार हाथ ते दई ॥३४७॥

सोरठा ।

रोम रोम हरषात, प्राण बचे अरु पति मिले ।
इस आनंद की बात, मनरंग जाने कौन कवि ॥३४८॥
इतने सीतानाथ, जागि कही लक्ष्मण कहां ।
गयो छांडि निज थान, जल्दी प्रिये पुकारिये ॥३४९॥
आपहि लेहु बुलाय, अहो रमण करुणा यतन ।
तब वलि कही सुनाय, हे लक्ष्मण आवो यहां ॥३५०॥
रघुनंदन के बैन, सुनि बोले लक्ष्मण तुरत ।
यह मैं आयो ऐन, अहो तात रेबलि रमण ॥३५१॥

चौपाई ।

ले गुणमाला आपन साथ । तहँ ते चलो रमा को नाथ ॥
शीघ्र राम ढिग पहुंचो आय। सिय वनमाला लखि हर्षाय ॥३५२॥
लक्ष्मण प्रति बोली हँसि बैन । यह चांदनि सदृश सुख दैन ॥
कहँ ते वीर साथ ले आय। कही सिया ने अति हित पाय ॥३५३॥
आड़ो करि वस्तर बनमाल । सकल अंग संकोचित हाल ॥
लज्जा भार भरी अधिकाय। सविनय सिया पास चलिजाय ॥३५४॥

करिके नमन लागिके पांय । तासु पास बैठी हरषाय ॥
लक्ष्मण हू मर्याद समेत । निवसे अति तन की छवि देत ॥३५५॥
तब रघुवीर मनै विहसाय । लक्ष्मण की छवि निरखत जाय ॥
इस अवसर डेरा के माहिं । जगी सखी वनमाला नाहिं ॥३५६॥
इत उत हेरति पूछत जाय । आपस में बातें बतलाय ॥
भयो कुलाहल अति ही जोर । सब जन जागि उठे तिह सोर ॥ ५७॥
चहुं दिशि दौर परे ततकार । ले ले के निज निज हथियार ॥
हेरत हेरत तिह ठां गये । सानुज जहां हते रघु गये ॥ ५८॥
गुणमाला गुण की मंजरी । सिया समीप लखी ता घरी ॥
देखि अनंदे सारे लोग । वहुत भये यह विधि संयोग ॥ ५९॥
मनकी वांछा पूरण भई । यह सबके मन में ठठि गई ॥
तुरत लोग राजा पर जाय । खबर करी हरषो नरराय ॥३६०॥
सो नरराय अनंदित गात । निज सौभाग्य सराहत जात ॥
तुरत नगर तें वनकों जाय । सा सैना अरु तूर वजाय ॥३६१॥
देखि राम लक्ष्मण को रूप । अति मनमांहि अनंदो भूप ॥
वहु विधि विनय सहित निज ग्रेह । लेय गयो वहु कियो सनेह ॥ ६२॥
सुभग महूरत शुभ दिन जोय । राजा रानी हरषित होय ॥
गुणमाला को करो विवाह । लक्ष्मण साथ सहित उत्साह ॥ ६ ॥

दोहा।

कमलाकृति पाई त्रिया, हरषो कमला नाथ ।
मगन भये सुख उदधि में, विधि दे दीनो साथ ॥३६४॥
कछु दिन विलमि रहे तहां, सिया राम लक्ष्मीश ।
पूरण पुण्य प्रताप से, नृप गण नावत शीश ॥३६५॥
तावत अतिवीरज नृपति, सांच नाम अति वीर्य ।
अति पुण्यी अति तेजसी, अति साहस अति धीर्य ॥३६६॥

तानै भेजो दूत इक, पृथ्वीधर के पास ।
आय लेख दीनो तुरत, खोलि क्वाई तास ॥२६७॥

सोरठा ।

हमने कियो पयान, दशरथ के सुत भरत पर ।
बहु नृप लेख प्रमाण, आय रहे हम पास सब ॥२६८॥
आवो देखत पत्र, तुम बिन हम अटके यहां ।
कीजे यात्रा अत्र, देरी न कीजे आध पल ॥२६९॥

चौपाई ।

सुनि पहुंचो लक्ष्मण वर वीर । भृकुटी वंक करी ता तीर ॥
पूंछत बात तासु को यात । कारण कवन चढ़ो नृप जात ॥३७०॥
तब वह दूत लगो बतलान । यह वृत्तांत को सकल निदान ॥
मैं जानत नीके हो वीर । तुमसे कहों सुनो धरि धीर ॥३७१॥
एक दूत पहिले नृप वहां । भरत पास भेजो सो तहां ॥
आनि नमावन कारण सोय । सुनि अरिदमन महा रिस होय ॥३७२॥
ताकी करी भंडना भूरि । निज नगरी ते कीनो दूरि ॥
सो आयो अपने नृप पास । राजा सों सब कहो प्रकास ॥३७३॥
राजा सुनि खिसियानो भयो । महा कोप करि कोपित ठयो ॥
या तें अति सेना ले साथ । चढ़ो जात साजी नरनाथ ॥३७४
इतनी सुनि लक्ष्मण ता घरी । चुप थांभी कछु बात न करी ॥
तावत पृथ्वीधर को दूत । तुरत चलो दलबल संयूत ॥३७५॥
ताके साथ राज सुत भ्रात । सिया सहित चाले हरषात ॥
गुणमाला को धीर्य बंधाय । जहँ की तहँ राखी हित पाय ॥३७६॥

कछु दिन वीते करत पयान। अति वीरज को पुर निकटान॥
डेरा पुर बाहिर दे दीन। तब मिलि तीन मतो तहँ कीन॥३७६॥
श्री जिन भवन देख रघुराय। तहां गये आनँद उपजाय।
करि दर्शन परमन सुख लेत। पुनि स्तवन मांहिं चित देत॥३७७॥
बहु विधि पूजि राम जिननाथ। मन वच तन नायो निज माथ॥
पुनि आये गणनी के पास। धर्मरमा नामा गुण वास।३७८।
भक्ति वंदना ताकी करी। आनंद सों स्तुति उच्चरी।
सीता राखि तासु के तीर। हर्ष युक्त चाले दोऊ वीर।३८०।

दोहा।

नृत्य कारिणी रूप धरि, चाले दोनो वीर।
ताको वरणन कीजिये, जे पूरण गुण धीर।३८१।

चौपाई।

मनो विधाता आपन हाथ। दोनो रूप बनाये नाथ।
इक गौरव इक श्यामल अंग। गंग जमुन मिलि मनो तरंग।३८२।
रक्त कंज सम दोउ पग थली। ऊपर गुंज करत बहु अली।
नख नख पर चंदरमा रेख। आनि बनाई कछुक विशेष।३८३।
घुरनि हुरनि घुरवा बहु रंग। किधौं गांठि सें बँधो अनंग।
कामी जन गज बंधन काज। जंघा युगल थंभ छवि राज।३८४।
कटि अति छीन उपीन नितंब। डरो न विधि यह बड़ो अचंभ।
समर पीठ छेत्र वर रूप। छी नाभि गंभीर अनूप।३८५।
त्रवलि सुभग शोभा सोपान। सो शोभा दीसत है आन।
मदन विलास सदन छवि ओज। वक्षस्थल बिच लसत उरोज।३८६।

पंचअन्ह आकार सुग्रीव । महा नाद गंभीर अतीव ।
चुबुक गर्त लखि कामो लोग । आपुन आप परत यह योग ।३८७।
अधर ललाई लखि विद्रूक । फीके लगत न लगत मलूक ।
भुजा मान को कथन अपार । को कहि ताको पावत पार ।३८८।
जनु सनाल सरुह हो सार । प्रफुलित कमल बड़ो विस्तार ।
आस पास ह्वै लसत कपोल । मदन सरूप बसे अति गोल ।३८९।
नयन त्रिविधि शोभा राजीव । श्रुत लों लगे ललित जिम सीव ।
चितवन पंचवान के वान । भौं पिनाक पर चढ़े निशान ।३९०।
विधत काम वश नर जे कोय । उपमा कहत बनत नहिं सोय ॥
उत्तमान आठैं को चंद । सद्रूत विजयत सदा अनंद ॥३९१॥
ता ऊपर अलकैं छवि देत । भ्रमर श्यामता जीतैं लेत ॥
नख शिख लों भूषण पट साज । यथा योग्य पहिरें द्युति राज ॥३९२॥
भलो बनाव बनो सनरंग । अंग अंग पर बसत अनंग ॥
हाव भाव विभ्रम सु विलास । यह प्रकार शोभा है तास ॥३९३॥
इनकी इनमें अरु सब क्रूट । पृथिवी हेरि फिरो चहुं खूंट ॥
इस शृंगार आय इन पास । रहो अनंग तासु को दास ॥३९४॥
नृत्य करत पहुंचो नृप पास । सकल सभा रीझी है तास ॥
अचरजवंत देखि सब भये । तब दोउ वीर बचन इमि कहे ॥३९५॥
अरे दुष्ट तैं कीनो कहा । मृत्यु निकट तुम आई महा ॥
तैं जानी दशरथ वैराग । भये दिगम्बर तजि सब राज ॥३९६॥
राम लछन वन गमन कराय । भई अयोध्या खाली भाय ॥
अब मैं लेहुं अयोध्या जाय । ऐसो मान धरो तैं आय ॥३९७॥

वृथा गरभ तैं कीनो यही । अब यमलोक पठावों सही ॥
ऐसो कटुक वचन सुनि राय। सभा सहित नृप क्रोध कराय ॥३९८॥
खड्ग त्रिशूल सुभट लै हाथ । उठो राय काटन कों माथ ॥
तब हरि आयुध लियो छिड़ाय। भाषत सकल वात यह भाय ॥३९९॥
और नृपन सों भाषत येह। भरत तनी तुम सेव करेय ॥
तव नृप सकल भागि कर गये। ध्वाई भरत की भाषत भये ॥४००॥
अचिरजवंत भये नर राय । लखि चेष्टा नटनी की आय ॥
ना जानो भरतेश्वर अंग । बल वीरज अरु बुद्धि प्रसंग ॥४०१॥
अब अतिवीर्य बांधि ले आय । सीता के ढिग पहुंचे आय ॥
दया रूप वच भाषे सिया । हे लक्ष्मण करुणा कर जिया ॥४०२॥
याके केश ढील अब देहु । जीवदान दे सुकृत लेहु ॥
इम सुनि वचन लछन छटकाय। तब अतिवीर्य महा सुख पाय ॥४०३॥
तब अतिवीर्य शांति चित होय । रघुवर सों वच भाषत सोय ॥
अहो नृपति तुम भल उपकार। कियो जगत को त्यागन हार ॥४०४॥
मैं अज्ञान थकी यह राज । भोग संपदा सकल समाज ॥
लीन भयो तजि आतम काज। विषयन के वस कीनो राज ॥४०५॥
धृग धृग मेरी बुद्धि मलान । सो तुम निर्मल करी सुजान ॥
तुम उपकारी सज्जन लोय। मिले भाग्यवश भ्रमबुधि खोय ॥४०६॥
तब रघुपति बोले विहसाय । आपन राज्य करो सुखदाय ॥
अहो नाथ यह राज्य समाज। विष मिश्रित भोजन किह काज ॥४०७॥
अब वन जाय केश उखराय । वस्त्राभरण तजे दुखदाय ॥
सो अतिवीर्य नाम जो भया। सो अब सत्य करो तजि मया ॥४०८॥
राम लछन सों क्षमा कराय । पहुंचो श्रुतसागर मुनि पाय ॥
अहो नाथ तुम दीन दयाल । मम दुखिया को करो निहाल ॥४०९॥

भव सागर तें लेहु उवार। यह अरजो मम चित में धार ॥
अहो वत्स भव तरनी जान। जिन दीक्षा लीजे सुख दान ॥४१०॥
नमस्कार करि परिग्रह त्यागि। भयो दिगंबर परिग्रह त्यागि ॥
ये अतिवीर्य महा मुनि राय। आतम ध्यान धरो चितलाय ॥४११॥
यह वृत्तांत भरतेश्वर सुनो। मनमें अचरज अति ही गुनो ॥
क्या देवन ने कियो सहाय। नृत्यकारिणी रूप बनाय ॥४१२॥
तब हँसि बोले ता लघु वीर। शत्रुहनन सौं परम गंभीर ॥
तब बरजो भरतेश्वर राय। धनि अतिवीर्य आत्महित ल्याय ॥४१३॥
न्यायवंत श्री रघुवर राय। तब अतिवीर्य पुत्र बुलवाय।
पिता भार सौंपो अधिकार। राज्य पाय हो विजय कुमार ॥४१४॥
रघुवर के चरणांबुज दोय। नमस्कार करि मद को खोय ॥
रतिमाला तातनी तातनो। लछमन को देने करि घनी ॥४१५॥
तब अतिवीर्य पुत्र चलि जाय। भरत राय की विनय कराय ॥
विजय सुंदरी भगनी सोय। भरत राय को दीनी सोय ॥४१६॥
विजय पुत्र को करि सनमान। विदा कियो पहुंचो निज थान ॥
सुनि अतिवीर्य निकट भरतेश। जाय विनय करि विगत कलेश ॥४१७॥
स्तुति करि आयो निज थान। अवर भयो सो सुनों बखान ॥
अब श्रीराम भक्ति बस होय। श्री जिन चरण पूजिकर सोय ॥४१८॥
चले विजयपुर को सुखदाय। सिया सहित ये दोनो भाय ॥
पृथ्वीधर को मिलियो जाय। हरषवंत हूओ नर राय ॥४१९॥

दोहा।

कछुक काल तहँ बीतियो, करि विचार दोऊ वीर।
गमन करन की आश धरि, यह मन चिंतत धीर ॥४२०॥

चौपाई।

तब हरि वनमाला ढिंग जाय। मधुर वचन करि त्रिय समझाय ॥
तुम बड़भाग्य धीर को धार। गृह में रहो न सोच विचार ॥४२१॥

भ्रात सहित हम गमन करेय । सत्य वचन भाषत हों येह ॥
वचन त्रिशूल लगे वर नारि । थरहर कंपी धीरज टारि ॥४२२॥
अहो नाथ जो येहि विचार । करनो हुतो तुम्हें निरधार ॥
तो किम फमरी ते निरवारि । प्राण बचाय करी वर नारि ॥४२३॥
तव हरि वचन अमिय सम कहे । धीरज धारि हिये में रहे ॥
करि सुयान ले जावों तोय । भो प्यारी वच निश्चय होय ॥४२४॥
तव वनमाला गल लिपटाय । कहत संग चलिहों नर राय ॥
बिछुरनि एक पलक की मोय । नहिं सुहाय निश्चय जिय जोय ॥४२५॥
तव हरि त्रिय हठ जानि सुभाय । मौन गही कछु वच न कहाय ॥
अर्द्धरात्रि निद्रा वस भवे । तव हरि वलि सिय निसरि सो गये ॥४२६॥
प्रात भयो लखि सूनी सेज । वनमाला चित चिंत धरेज ॥
सोच समुद विच परी दिढाय । विधि की बात कही नहिं जाय ॥४२७॥
राजादिक सुनि चक्रित भये । नीठि नीठि धीरज गहि रहे ॥
भोजन समय उलंघि जव गयो ॥ तव प्रधान समझावत भयो ॥४२८॥
भई रसोई जव तैयार । वनमाला सखि करत पुकार ॥
उठो पियारी भोजन करो । शीघ्र पिया को दर्शन करो ॥४२९॥
नीठि नीठि करि सखि ले जाय । भोजन शाला में बैठाय ॥
ग्रास धरे मुख नहिं रुचियाय । उलटि गिरत पृथ्वी पर आय ॥४३०॥
जल पिइ मुख पोंछत उठि गई । गृह कोना में तिष्टत भई ॥
चित विच समझि समझि पछिताय । कवधौं मिलें प्राणप्रिय आय ॥४३१॥
यह तो कथा रही यह थान । अवर सुनो जो भयो वखान ॥
अव श्रीराम नगर अरु ग्राम । उलघंत चले परम सुख धाम ॥४३२॥
नाना देश विहार कराय । क्षेमांजलि पुर पहुंचे आय ॥
नगर वाह्य वन तिष्टे वीर । परम पियारी सीता तीर ॥४३३॥

तब लक्ष्मण सामिग्री लाय। नाना विधि के असन कराय ॥
राम प्रतै तब लक्ष्मण कहै। नगर विलोकन मनसा लहै ॥४३४॥
देखत नगर परम सुख रूप। नगर तनी नर नारि अनूप ॥
लक्ष्मण नगर विलोकत जवे। रूप देखि लक्ष्मण को तवे ॥४३५॥
मोहित भये सकल नर नारि। करत परस्पर वचन उचारि ॥
वचन सुनत लक्ष्मण बोलियो। कौन प्रकार वचन बोलियो ॥४३६॥
तब इक पुरुष कहे समझाय। यह नगरी को नरपति आय ॥
ताकी जितपद्मा धिय जान। रूपवंत अरु गुण की खान ॥४३७॥
तासु प्रतिज्ञा ये मन धरे। योवन रूप गर्विता भरे।
जनक हाथ की शक्ती गहे। जीवित बचे कंथ सो वहे ॥४३८॥
अहो भ्रात वह कन्या जान। विकट सरकही गाय समान।
ताके अर्थ प्राण जो देय। तव कन्या को कौन ग्रहेय ॥४३९॥
तब लक्ष्मण यह बात सुनेय। मन में राग रोस भयो तेय ॥
नृपति सदन चालो उमगाय। पहुंचो राजद्वार ढिंग जाय ॥४४०॥
द्वारपाल बोलो उमगाय। कौन देश तें भ्रमण कराय ॥
किह कारण आये महाराज। कारण कहो सकल सुभ आज ॥४४१॥
तव दशरथ सुत कहि समझाय। नृपति दरश की मनसा आय ॥
द्वारपाल निज थानक ओर। थापि गयो नरपति की ठौर ॥४४२॥
हाथ जोरि करि अरज करेय। रूपवंत नर आयो एय ॥
तासु रूप को वरणन करे। कोटि जीभ तें ना उच्चरे ॥४४३॥
तब नृप कही लाउ सुभ थान। देखों कैसो पुरुष सुजान।
द्वारपाल ले लक्ष्मण संग। चलो सिंह मनु निर्भय अंग ॥४४४॥
देखि सभा सब मोहित भई। इक टक चितवत ही रहि गई ॥
विन प्रणाम देखो नर राय। कछु इक रोस हिये विच ल्याय ॥४४५॥

तब नृप पूछत रूप विसाल। कौन अर्थ आये दरहाल।
वर्षा काल मेच रस धैन। लक्ष्मण वच बोले सुख दैन ॥४४६॥
भरत राय को सेवक जान। पृथ्वी देखन हुकुम प्रमान ॥
तेरी पुत्री को विरतंत। सुनि आयो देखन गुणवंत ॥४४७॥
शत्रुदमन नृप कहि सुविख्याय। मेरे कर की शक्ती खाय ॥
ताकरि बचे वरे सो धिया। यह निश्चय करि जानो जिया ॥४४८॥
तब लक्ष्मण बोले विहसाय। निज पौरुष सब देहु चलाय ॥
यह विवाद दोउन को भयो। देखि सभा जन अचरज लयो ॥४४९॥
तावत जितपद्मा सो आय। लखत झरोखा ते सुखदाय ॥
लक्ष्मणको लखि मोहित भई। कामबाण अति हिय छिद गई ॥४५०॥
कर हलाय नयनन की सैन। वचन अधर तक खिरि सुख दैन ॥
मत पिय खाउ शस्त्र की कोर। जिय घबरात रूप लखि तोर ॥४५१॥
तब हरि लखि जितपद्मा ओर। मत घबराय पियारी मोर ॥
एम समस्या लक्ष्मण दई। तब हियरे बिच कछु थिर भई ॥४५२॥

दोहा।

तब हरि नृप प्रति यों कहे, अब क्या ढील कराय।
शक्ति प्रकाशो आपनी, अब क्या देर कराय ॥४५३॥

अडिल्ल।

महा कोप करि शकती तुरत चलाइयो।
सो लक्ष्मण दहिने कर ताहि गहाइयो ॥
जैसे सिंह मृगन को पकरत श्रम कहा।
अरु दूजी शकती दूजे करते गहा ॥४५४॥

चौपाई।

तीजी बगल माहिं दाबियो। याही विधि चौथी गहि लियो ॥
तब राजा मन अति खिसिआय। पंचम शकति चलावत भाय ॥४५५॥

ज्यों व्रण मृग दांतन सो ग्रहे। त्यों दशनन बिच पकरि सो लहे ॥
जय जयकार देव मिलि कियेः। पुष्पवृष्टि वर्षा वरषियो ॥४५६ ॥
तब लक्ष्मण बोले विहसाय। शक्ति होय तो और चलाय ॥
तब नृप लज्जित ह्वै शिर नाय। तुम गुणग्राही सज्जन सुभाय ।४५७।
शशि वदनी मृग नयनी त्रिया। कामवाण करि वीधो जिया ॥
लक्ष्मीधरके निकट वसाय। ज्यों निशि पति ढिंग रोहणि आय ।४५८।
तब हरि नृप लखि वदन मलान। कहत विनय करि वचन प्रमान ॥
मुझ बालक पर क्षमा कराय। तुम गुणग्राही सजन स्वभाय ।४५९।
तब नृप प्रफुलित वदन विशाल। हरि कों कंठ लगावत हाल।
मैं अति धीर वीर बलवान। सो तैं निर्बल करो सुजान ॥४६०॥
धन्यरूप बल बुद्धि चरित्र। मैं नयनन करि लखो पवित्र ॥
इम गुण लक्ष्मण के गाइयो। तब हरि शीस अधो मुख कियो ॥४६१॥

दोहा।

तब राजा मन हरषियो, प्रण पूरो धिय सोर ॥
भयो धन्य दिन आज को, हरष भयो नृप जोर ॥४६२॥

अडिल्ल।

अहो वत्स अब धिय की आशा पूरिये।
पाणि ग्रहण करि प्रीतम मो दुःख चूरिये ॥
तब हरि अमिय समान वैन मुख तैं कहे।
श्री रघुवर की आज्ञा हम शिर पर धरे ॥४६३॥

दोहा।

तब नृप जानी वन विषैं, वसैं सिया युत राम।
तिन दर्शन परसन विषैं, लगो चित्त चलि जान ॥४६४॥

चौपाई।

चलो राय सँग परिजन लोय। अरु प्रधान अंतेवर जोय॥
रथ घोटक हस्ती सुखपाल। घने सजाय चलो गुणमाल॥४६५॥
वजत मृदंग पटह ध्वनि होय। मनु श्रीराम सुयश ध्वनि होय।
नटन नृत्य कारिणी स्वरूप। गावत गान मान भरि पूर॥४६६॥
वंदी जन ते विरध बखान। भांड हँसावत नकल करान॥
गगन बीन विजली चमकान। ध्वजा पताका झुमि फहरान॥४६७॥
इत्यादिक बहु साज समाज। चलो नृपति मिलने बलि राज।
धरत प्रमोद सकल जन चले। ज्यों हरि मिलन देव बहु भले॥४६८॥

दोहा।

रज छाई आकाश में, घोर शब्द सुनि सीय।
कहत बात सो भल नहीं, सावधान करि जीय॥४६९॥
श्रीरघु बाण कमान पर, दृष्टि धरी रिस खाय।
अरु विचार मन में करो, कौतुक लक्ष्मण आय॥४७०॥

छन्द।

इस भांति विचार कराई। तव निकट सैन युत राई॥
आवत लखि राम विचारा। नहिं युद्ध राग निरधारा॥४७१॥
तावत नृप चरणन आई। रघुपति के शीस नवाई॥
कर जोरि अरज बहु कीनी। मैं दास शरण तुम लीनी॥४७२॥
इस भांति बहुत मनहारा। कीनी नृप हित करतारा॥
अरु रानी धिय युत आई। सीता को शीस नवाई॥४७३॥
कर जोरि अरज बहु कीनी। सीता बहु आदर दीनी॥
तव नृपति चलन की अरजी। लक्ष्मीधर को मैं करजी॥४७४॥

ऋण रहित करो मेरे स्वाई। तब रघुपति मन हरषाई।
श्रीराम लछन दोऊ भाई। गजराज चढ़े सुखदाई ॥३७५॥
जित पद्मा सिय युत होई। रथ बैठि पयान करोई।
नृप सदन पहूंचे जाई। नृप आदर करत बनाई ॥३७६॥
नृप योग्य अशन तिन दीनो। आभूषण वस्त्र नवीनो ॥
जो राय सेव विधि कीनी। कछु पार न वार प्रवीनी ॥३७७॥

दोहा।

शुभ दिन मंगल कार्य करि, हरि को निज धिय देय।
पाय लछन मृग नयनि को, काम रसिक उमगेय ॥३७८॥

चौपाई।

भोगत भोग गयो कछु काल। गमन विचार करो दरहाल॥
जिमि बनमालाको समझाय। तिमि जितपद्मा सीख सिखाय॥३७९॥
चले गोप्य निशि अर्द्ध मँझार। प्रात भयो जागो नर नार ॥
सिया सहित दोनो बलवीर। सुभ छल चले गये गुणधीर ॥३८०॥
इम नृप धिय नर नारी सबे। राम गमन चिंता भइ तबे ॥
अब सिय पति लक्ष्मण युत होय। आगे को पग दीनो सोय।४८१।
वन की शोभा लखि सिय राम। करत किलोल सुखनकी धाम।
मधुर बचन सिय पति सों कहे। दोउअन मध्य प्रीति को लहे।४८२।
जहँ प्रीतम को संगम होय। वन वह नगर समान लखोय ॥
लक्ष्मण राम कंठ की माल। प्रेम प्रीति करि बंधि दरहाल।४८३।
लागि धतूर तरु कल्प समान लखन बंबूर अमिय सम जान।
धूप लगत मनु शशि चांदनी। बनी अयोध्या के सम गनी।४८४।

यह सब प्रेम तनो व्योहार । या में संशय नाहिं लगार ॥
इस विधि चले जात जिय तीन। बोलत बचन नवीन नवीन॥४८५॥
चलत सिया जिय खेदित होय । पसरि गई पृथ्वी पर सोय ॥
तब रघुपति सिय गोद उठाय । पूछत बात कंठ लिपटाय ॥४८६॥
अहो नाथ पग दूखत मोर । लगी पियास अवर घनघोर ।
तव हरि शीतल जल ले आय। पीवत सिया जिया सियराय॥४८७॥
अरु ललाट को पोंछि पसेव । पवन चालि लक्ष्मण सुख देव ॥
उठी टेकि कर पृथ्वी माय। अहो राम कहि कहि निकुताय॥४८८॥
कितक दूरि नगरी है राम । अब नहिं चलो जात वषि धाम ॥
कर उठाय बोले रघुवीर । यह परवत ढिग नगर गंभीर ॥४८९॥

दोहा ।

तासु नगर मधि आय करि, सिया सहित दोउ वीर ।
क्षणक मात्र विश्राम करि, राम कहे सुन वीर ॥४९०॥
भोजन वेला आइयो, ढील न कीजे कोय ।
सुने वचन हरि शीघ्र ही, भोजन लायो जोय ॥४९१॥
करी रसोई विधि सहित, अन्न दुग्ध मिष्टान ।
पुण्यवंत नर जीव को, मिलत अधिक सो आन ॥४९२॥

चौपाई ।

उठो सिया भोजन करि लेउ। मारग खेद जलांजलि देउ ॥
करि स्नान ध्यान जिनराय। राम लछन शीता सुखदाय ॥४९३॥
करि अहार विश्राम करेय। विगत खेद ह्वै तिष्ठे तेय ॥
नगर लोक जन भाजन लगे । तब श्रीराम जु पूछन लगे ॥४९४॥
कौन अर्थ किह कारण वीर । तुम तजि जात अन्य थल धीर ॥
तब नर एक कहे समझाय । अचरज बात कही ना जाय ॥४९५॥

यह परवत के ऊपर बीर। अति विकराल शब्द गंभीर॥
पृथ्वी कंप करत दुख दाय। वज्रपात सम सिंह भगाय॥४९६॥
ता कारण नगरी तजि जाय। प्रात भये आवत सुखदाय॥
तब सिय राम प्रतै इम कहै। चलो साथ इनके सुख लहै॥४९७॥
तब मुसिक्याय कहैं दोउ बीर। हे प्रिय कोमल शियल शरीर॥
गमन करो पुर वासिन संग। आनि मिलेंगे प्रात असंग॥४९८॥
हम यह परवत पर चढ़ि जाय। कौतुक लखन कि मनशा थाय॥
हे प्रिय तुम अति हित करतान। आपर निवरन होय सुजान॥४९९॥

दोहा।

इम कहि पिय को संग गहि, चली जनक की धीय।
मन धीरजता धारि के, बँधी प्रेम रसरीय॥५००॥

चौपाई।

अब दोउ चलि परवत की ओर। चली जानकी वदन मरोर।
विकट निपट परवत लखि सिया। कंपत अंग डरत भाजिया॥५०१॥
कहुं पषान कहुं कंटक घने। विकट पंथ देखत भय सने॥
चुभि पषान पग लचि लचि जाय। अरे राम रे कहत बनाय॥५०२॥
कंटक कोर पगन चुभि गई। ससकति नाक सकोरति भई॥
अहो लछन तुम भल नहिं कीन। मम शरीर खेदित करि दीन॥५०३॥
जस तस मैं नगरी में आय। नहिं विसराम करो सुखदाय॥
पवन विकट करि चीर उडान। पकरि दियो लछमन चपलान॥५०४॥
हौले हौले पग धरि सिया। चली आउ डरपै अति जिया॥
तव सिय बोली हे रघुवीर। प्रेम डोरि करि बँधो शरीर॥५०५॥
सो मुझ खेंचत लावत अंग। और भांति नहिं गमन प्रसंग॥
खेदित अंग पसेव बहाय। दीरघ स्वांस लेय कुम्हिलाय॥५०६॥

तरे लखत तब कँपत शरीर। तब विश्राम लेत धरि धीर॥
अहो नाथ मम भूमि मिलान। कितक दूरि अब रहो सुजान॥५०७॥
चली चली आवो तुम सिया। मति घबराव धीर धरि जिया॥
आय गयो परवत को छोर। सत्य वचन मानो जिय मोर॥५०८॥
कठिन कठिन परवत के शीस। आनि पहूंची बिस्वा बीस॥
देश भूषण कुल भूषण सोय। त्रिभुवन पूज्य जगत गुरु दोय॥५०९॥
राग द्वेष सब दूरि पलान। आतम ध्यान धरें गुणवान॥
ऐसे गुरु कों लखि श्रीराम। लछन सिया युत करि परनाम॥५१०॥
धन्य धन्य मुख भाषत भयो। खेद सिया को सब हरि गयो॥
विनय सहित ढिंग बैठत सुभाय। कारण लखो आय दुखदाय॥५११॥
असुर कुमार आय घन घोर। शब्द करो अति विकट कठोर॥
बीछू सर्प अनेक प्रकार। विषधर रूप धरे ततकार॥५१२॥
मुनि तन लिपट गये ततकाल। देखि सिया हूवी वे हाल॥
उठि लपिटानी पति के अंग। कंपित बदन न धीरज संग॥५१३॥
जनक सुता को धीर्य बँधाय। मुनि के निकट गये दोउ भाय॥
बीछू सर्प भगावत भये। मुनि के चरण कमल को नये॥५१४॥

दोहा।

करि स्तुति गुरु निकट ही, बैठे चतुर सुजान।
कछुक काल निशि बीतियो, और सुनो व्याख्यान॥५१५॥

अडिल्ल।

असुर आय विकराल लाल करि नयन कों। सिंह सर्प अरु बीछू भये दुख देन कों॥ भूतन के गण नाचत और पिशाच ये। करत अनेक प्रकार उपसरग आयके॥५१६॥

दोहा।

इत्यादिक उपसर्ग बहु, कियो महा विकराल।
मुनि सुमेरु सम थिर रहे, जिनहिं नवावत भाल॥५१७॥

चौपई ।

तब श्रीराम लछन दोउ भाय । क्रोध रूप ह्वै चलि उमगाय ॥
धनुष बाण निज करमें लिया । शब्द सुनत कांपत भा जिया ॥५१८॥
वज्रपात सम शब्द कराय । असुरी माया दूरि पलाय ॥
बलि हरि जानि भागि सब गये । विघन दूरि करि आनंद लये ॥५१९॥
श्री मुनिराय ध्यान में लीन । शुक्ल ध्यान आराधन कीन ॥
चारि घातिया कर्म खिपाय । केवल ज्ञान भानु प्रगटाय ॥५२०॥
आसन कांपो देवन तनो । प्रभु कों केवल पद ऊपनो ॥
चतुर्निकाय देव तहँ आय । पूजा भक्ति करी चितलाय ॥५२१॥
सिया सहित ये दोनो भाय । वार वार प्रभु शीस नवाय ॥
प्रभु मुख धरमामृत पी सवे । लहो भेद तत्त्वारथ सवे ॥५२२॥
केइ इक परम दिगंवर होय । सकल परिग्रह तजि हित जोय ॥
केइ इक श्रावक व्रत को लेय । क्षुल्लक ऐलक भेष धरेय ॥५२३॥
केइ इक सम्यक दर्शन पाय । मगन भये जिन धर्म सहाय ॥
अरु गरुडेन्द्र प्रसन्न सो होय । राम प्रतै इम भाषत सोय ॥५२४॥
हे भव्योत्तम गुण गंभीर । हरषवंत युत लखत शरीर ॥
जो कछु इच्छा तुम जिय होय । तुमकों देहुं हरष युत सोय ॥५२५॥
तब श्रीराम प्रणाम करेय । यह वच मो भंडार धरेय ॥
जब शुभ कारण परसी कोय । करौ सहाय आनि करि जोय ॥५२६॥
ऐसे बचन परस्पर किये । धर्म सहाय सुयश को लिये ॥
करि विहार केवलि भगवान । भवि जीवन को पोत समान ॥५२७॥
अरु ता नगरी राजा आय । राम चरण को शीस नवाय ॥
वंशस्थल परवत के शीस । करे जिनालय विस्वा वीस ॥५२८॥

दोहा ।

कछुक काल तहँ बीतियो, धर्मध्यान युत होय ।
गमन करत तहँ ते भिया, सिया सहित ये दोय ॥५२९॥

वन परवत उलघँत चलत, क्रम क्रम करि यह भाय।
दंडक वन पहुंचत भये, आनंद हर्ष बनाय ॥५३०॥

सवैया ३१।

पीपल पतंग अरु चंदन पलाश जंवु खदिर तमाल धव अ-र्जुन अजान के। सोलश्री केला कैथ बंबूर नीम बेल कमरख क-दंब बेर आम्र रसखान के॥ सरस सलोने सो कहरत अशोक वृक्ष केते वृक्ष ऐसे पत्र मानो क्रिरपान के। केते शूलधारी अरु केते हैं त्रिशूलधारी नाना भांति वृक्ष लगे फल फूल वान के॥५३१॥ हर्र रु वहेरा अरु खारक चिरोंजी दाख इमली अमलतास अरु क-चनार के। भिसई सिरस बांस सेंजन वहुत कांस दाडिम अन-न्नास अरु कचनार के॥ केते वृक्ष श्रवत श्रवत केते अमृत के केते क्षीर वृक्ष क्षीर श्रवत सु डारके। केते रोग हरत करत रोग केते वृक्ष केते वृक्ष ऐसे सुधा निरवार के॥५३२॥ कहूं सघनाई कहूं वि-रल वताई कहूं छह की निकाई कहूं महा भीमताई है। कहूं लोट पोट वृक्ष वृक्षन सों मिले वृक्ष घिस घिस आपुस अगनि दुखदाई है॥ कहूं फल फूल कहूं डार पात मूल कहूं गुच्छ वृक्ष कहूं पत्र पुष्प रहिताई है। कहूं सरितान के समूह ठौर ठौर वहें कहूं जल रूप रेख देत ना दिखाई है॥५३३॥ कोकिल कपोत कीर कौसिक चकोर कोक केकीकर हंस के ठौर ठौर गोल हैं। पिक वक चक्र-सार सारस शशक सार हंसन की पांति जहां करत किलोल हैं॥ नाना जाति नाना भांति पंक्षिन के समुदाय करत विहार बोल वोलत अमोल हैं। फूलन की मकरंद आवत अनोखी जहां भौ-रन के पुंज गुंज करत निडोल हैं॥५३४॥ कहूं गजराज कहूं सूकर समाज कहूं महा मृगराज कहूं नाना भांति मृग हैं। कहुंक भुजंग वड़े वड़े करै फुंकार क्रोधित स्वतः स्वभाव करें लाल दृग हैं॥

कहूं माल कहूं कोल कहूं भ्रमें वृश्चिक हैं कहूं कुक रूप धारें फिरें बक हैं। ऐसे वन निर्जन देखि रघुचन्द्र तब तिष्ठमान होत भये हरि सिया ढिग हैं ॥५३५॥ तब तहां सीता जी ने भोजन तैयार करो करे नाना विधि नाना भांति स्वाद ल्याय के। भोजन की वेला पाय तब तहां रघुवीर तहां कर द्वारा पेषन स्वभाव को बढ़ाय के॥ पुण्य के प्रभाव तहां चारण मुनीश आय अवधि के धारी हितकारी शुद्ध भाय के। देखि पढगाये राम नौधा भक्ति धारि चित्त देत सो अहार महा चित्त हरषाय के ॥५३६॥ तहां इक वृक्ष पर बैठो हुतो पंक्षी इक देखिके अहार देत मनमें विचारतो। धिक धिक पंक्षी को जनम महा निंदनीक कष्ट को स्वरूप कछू भेद नाहिं धारतो॥ अहो धन्य मनुष को जन्म इस लोक मांहि देत दान पूजा करि आरती उतारतो। ऐसे अनुमोदन करत खग मन माहिं मोहि शक्ति कछू नाहिं पायो जन्म हारतो ॥५३७॥ आगे मैं मनुष भव माहिं करे नाना पाप जाय के नरक माहिं सहे दुख जाल ही। निसरि तिर्यंच योनि माहिं भ्रमो बार बार कहत बनै न कछू दुःख को हवाल ही॥ अब दूजी शर्ण कोऊ इन बिन मोहि नाहिं मनमें विचारि गिरो वृक्ष सेती हाल ही। हठ करि परो जाय चरण उदक माहिं भयो महा शोभनीक जागो जाको भाल ही ॥५३८॥ लखि शुद्ध निजरूप और ही अंकृति तब पाय के अनंद नृत्य करत सुहावनो। आखिन सूं अश्रु पात डारत अनंद मय मन सों मुदित के गुणानुवाद गावतो॥ करि के संकोच दोऊ पांय नमि बार बार मुनि केर आगत महान सुख पावतो। खग को प्रकाश इस भांति देखि रघुराय मानि के अचंभ मन शुद्ध भाव धारतो ॥५३९॥ तब सो मुनिंदको

प्रणाम करि बार बार रघुचन्द्र पूछे यह पंक्षी हुतो नग को। अहो नाथ पंक्षी गृद्ध हतो कछु और रूप और रूप भाखे अब दीखत सुभग को॥ और रूप और रंग और मन की तरंग खग कछु और भयो चोंच पांख पग को। शांति चित भयो अब तिष्टत तिहारे पास कारण कवन नाथ कहो भेद खग को ॥५४०॥

दोहा।

सुनि मुनि बोले राम सों, पूछी भली नरेश।
अब याको विरतंत कछु, सुनिये करि मन एक ॥५४१॥

अडिल्ल।

दंडक नामा देश हतो आगे यहां। राजा दंडक नाम राज करतो महा॥ जैन धर्मसों विमुख दुराचारी महा। आये मुनिवर पंच शतक तब ही तहां ॥५४२॥ देखि राय मुनिराय क्रोध मन में कियो। तिनकों कोल्हू माहिं डारि पिरवाइयो॥ उनमें कोइ इक मुनिवर पाछे आइयो। जान लगो ता नगर बरजि किनहू दियो।५४३। नाथ जाउ मत नगर माहिं नृप दुष्ट है। मुनि कोल्हू में पेरे पापी रुष्ट है॥ सुनि के ऐसे वचन क्रोध आयो तबे। मन में करत वि-चार कौन कारण अबे॥५४४॥ मुनि पिरवाये नृपति चलो पूछें तहां। ऐसे चित्त विचारि मुनी पहुंचे तहां॥ देखि नृपति को कहें अरे पापी महा। मो गुरु हति अब जियो चहत तूं है कहा॥५४५॥ ऐसे कहि मुनिराज कोप अति ही कियो। वाम कंध तें अग्नि पूतरा निसारियो॥ जारि वारि सब देश करो अति खाख ही। पूरी मुनि के मन की सब अभिलाष ही ॥५४६॥

दोहा ।

सो राजा मरि सातवें, नरक गयो महराय ।
अति दुख भुगतो तहां को, सो दुख कहो न जाय ॥ ४७॥
निसरि तहां ते पाप वश, धरी कुयोनि अनेक।
सो अब यह पंछी भयो, गृद्ध नाम अविवेक ॥ ५४८॥
अब याके पापान की, भई निवृत्ति अनेक ।
हमें देखि भव सुमिरना, याके भई विवेक ॥५४९॥
शांति चित्त करि अब यहां, बैठि रहो अब आय ।
सुनि के मुनि के बचन तब, अति हरषो रघुराय ॥५५०॥
देय अनुव्रत गृद्ध को, गगन मार्ग ह्वै सोय ।
गये जगत के गुरु तवे, सीता हरषित होय ॥५५१॥
पक्षी सों अति प्यार करि, राखो अपने पास ।
नाम जटाऊ धारि कै, पुजवत ताकी आस ॥५५२॥
सीता लक्ष्मण राम अरु, पक्षी चौथो होय ।
रहन लगे ता वन विषें, और सुनो भवि लोय ॥५५३॥

चौपाई ।

लक्ष्मण इक दिन सहज स्वभाय । वन की शोभा देखत जाय ॥
धरें पिताम्बर साहस धीर । विचरत वन में अद्भुत वीर ॥५५४॥
गंध मई तहँ आई पौन । तब सोचो लक्ष्मण गुण भौन ॥
यह अद्भुत है गंध महान । कहँ तें आवत सुख की खान ॥५५५॥
चौधा चौंधि रहो वलवंत । विस्मय भयो रमा को कंत ॥
चलत खोज चालो तिह वार । जहँ ते आवत पवन सुधार ॥५५६॥

गयो बांस विड के जब पास । देखत भयो खड्ग परकास ॥
महा सुगंध भरो रमणीक । बंस विडे पर तिष्ठत ठीक ॥५५७॥
सुनि श्रेणिक नायो निज भाय । किह् कारण तहँ निवसो नाय ॥
तब यह वचन कहैं गणराय । सुन मगधाधिप चित्त लगाय ॥५५८॥
खरदूषण सुत संबु कुमार । सुन्दर काय बली अधिकार ॥
सो यह सूर्यहास्य के काज । जपत मंत्र ता वन में राज ॥५५९॥
द्वादश वर्ष तनो यह नेम । वैठो तहां महा धरि प्रेम ॥
पूरी अवधि भई जब ताय । ता में एक दिना रहि जाय ॥५६०॥
सूरज हास्य खड्ग जब आय । रहो वंस विडमें ठहराय ॥
ताकी गंध महा परकास । जानि गयो लक्ष्मण ता पास ॥५६१॥
लियो खड्ग तिह शीघ्र उतार । निज कर में राखो निरधार ॥
लेन परीक्षा ताकी तहां । वाहो वंस विडे में महां ॥५६२॥
विडा सहित संबुक को शीस । काटि गयो सो विस्वा वीस ॥
ले लक्ष्मण यह खड्ग महान । गयो आप थानक बुधिवान ॥५६३॥
देखि राम मन हरषित होय । कथन सुनो आगे अब सोय ॥
चन्द्रनखा संबुक की माय । ताके हेतु असन तहँ ल्याय ॥५६४॥
देखो विडो कटो तहँ सोय । मनमें एम विचारत जोय ॥
यह चहिये मो सुत कों नाहिं । न कछु बात समझो मन माहिं ॥५६५॥
जा में बैठि खड्ग साधियो । काटत ताहि बार ना कियो ॥
यह कहि इत उत देखत भई । कटो शीस ताके ढिग गई ॥५६६॥
जुदो शीस धड तहँ देखियो । जहां विलाप अधिक तिन कियो ॥
मूर्छा खाय परी भू माहिं । रही सुधि तन मन की नाहिं ॥५६७॥
पवन घालि जब चेतन भई । हा हा कार करत तहँ ठई ॥
देखि पुत्र की दशा विहाल । अंग अंग कंपी ता काल ॥५६८॥

हनत उरस्थल दोनो हाथ । विह्वल होय धुने निज माथ ॥
रोवत बहुत पुकारि पुकारि। निर्जन वनमें इकली नारि॥५६६॥
लै कर मस्तक कहत सुनाय । अहो पुत्र ये दुख की दाय ॥
कौन विक्रिया मो सों करे । मंगल माहिं अमंगल धरे ॥५७०॥
उठो पुत्र मो कहों करेउ । खड्ग सहित देहु दर्शन तेहु ॥
इन आदिक बहु वचन सुनाय । बोले कहा मृतक की काय ॥५७१॥
सोची कछू भई कछु और । झूठी परी चित्त की दौर ॥
निश्चय जानि मृतक सुत सोय। तब मन माहिं विचार करोय॥५७२॥
अवधि अंत यह कारण भयो । सो सुत मारि खड्ग ले गयो ॥
तब सुत शीस धारि भू माय। शत्रु लखन चाली अधिकाय॥५७३॥
चलत चलत पहुंची सो तहां । लक्ष्मण राम बिराजत जहां ॥
देखन लगी काम को वान । भूलि गई सुत शोक महान ॥५७४॥
देखो मन की यह विपरीति। कहँ सुत शोक कहां यह रीति॥
धरि के कन्या रूप महान । बैठी एक वृक्ष तर जान॥५७५॥
रुदन करत सीता ने सुनी । गई तासु ढिंग ऐसे भनी ॥
मति रोवे मेरे ढिंग आय । हाथ पकरि बहु धीर्य बँधाय॥५७६॥
तब सिय राम पास लेगई । देखि राम यह वाणी चई ॥
कौन कहां ते आई भ्रमै । निर्जन वन में इकली भ्रमै ॥५७७॥
भो पुरुषोत्तम मेरी माय । मैं अवला तब ही मरि जाय ॥
ताके शोक थकी मो तात । मरो भयो सो दुख अवदात ॥५७८॥
मैं कुटुम्ब विन इकली सही । मरण हेतु दंडक वन रही ॥
अब दयालु तुम दरशन पाय । साता भई चित्त मो आय ॥५७९॥
अब मेरे छूटें नहिं प्रान । ता पहिले मोहि इच्छो जान ॥
जो कुलवती शील दृढ धरे । ताकी रक्षा को नहिँ करे ॥५८०॥

ऐसे वच सुनि लक्ष्मण राम । यह निरलज्ज कौन है वाम ॥
जानि मनै कछु कहिय न बात । मौन पकरि तिष्टे दोऊ भ्रात ।५८१।
मन में जानि गई यह बात । ये निरइच्छुक दोनों भ्रात ॥
नाखत स्वांस बोलती भई । मैं जावों यह कहि उठि गई ॥५८२॥
चली क्रोध करि तहँ ते सोय । महा चित्त आकुलता होय ॥
करि विरूप नाना विधि अंग । त्रिय चरित्र बाढ़ो मनरंग ॥५८३॥
निज नख सों निज अंग मझार । क्षत कीने सब ठौर विचार ॥
विह्वल रूप केश छुटकाय । महा कुरूप पिया पर जाय ॥५८४॥
महा विलाप कियो तहँ जाय । गिरी भूमि पर मूर्छा खाय ॥
विह्वल रूप देखि ता घरी । पूछत ताहि गोद में धरी ॥५८५॥
कौने करी दुखित कहु मोहि । अरु यह कारण किह विधि होय ॥
तब सर्व कहन लगी विररंत । सुनो नाथ कहिये अब तंत ॥५८६॥
मैं निज सुत को भोजन लेय । गई वनांतर गमन करेय ॥
तहँ देखा मैं सुत को शीस कटो परो सुनिये अवनीश ॥५८७॥
देखि अवस्था भई उदास । रुदन करन लागी ता पास ॥
जिह मारो मो सुतको नाथ । खड्ग लेय कीनो निज हाथ ॥५८८॥
सो वह मोहि अकेली जानि । मो सों करी कुचेष्टा आनि ॥
भुज सों पकरि न छांडी मोहि । कहा कहों हे स्वामी तोहि ॥५८९॥
नख करि दांतन करि मो अंग । सकल विदारो कीनो भंग ॥
मैं अवला वह अति बलवान । कहा कहों हे नाथ सुजान ॥५९०॥
महा कष्ट सों पुण्य प्रभाय । शील बचाय पहूंची आय ॥
तीन खंड को रावण राय । महा तेजधारी अधिकाय ॥५९१॥
काहू करि जीतो नहिं जाय । इस प्रकार मो भ्राता आय ॥
अरु तुम से वडभागी नाथ । नभचर बहुत नवावत माथ ॥५९२॥

हनन दीन दुख अति बलवंत । सो मेरो भरतार महंत ॥
दैव योग मेरे अब आय । परी अवस्था यह विधि भाय ॥५९३॥
चन्द्रनखा के सुनि ये बैन । तब मन क्रोध बढ़ो दुख दैन ॥
तातकाल उठि चलियो धाय । पुत्र मृतक ढिंग पहुंचो जाय ॥५९४॥
देखि पुत्र मुख बहु दुख कियो । शत्रु हनन को मन तब कियो ॥
मंत्र करो घरमें पुनि आय । निज मंत्रिन ढिंग लिये बुलाय ॥५९५॥
तब सब ही मिलि इकठे होय । मंत्र विचारो यह विधि सोय ॥
पठवौ दूत दशानन पास । भेद सबै दे दियो प्रकास ॥५९६॥
सैना साथ लेय चतुरंग । बड़े बड़े सो योद्धा संग ॥
बड़े समाज साथ चलि जाय । तब शत्रुन को जीतो राय ॥५९७॥
बिना प्रयोग खड्ग ले हाथ । आयो है सुनिये हे नाथ ॥
वेऊ बड़े पुरुष हैं कोय । इकले वनमें विचरत सोय ॥५९८॥
सुनि के वचन बुलायो दूत । जल्दी भेजो धरि मन कूत ॥
आपन सैना सब सजवाय । करन लगो त्यारी अधिकाय ॥५९९॥
आवे आवे जब लग दूत । ता पहिले खग गरभ संयूत ॥
चलेः शीघ्र बाजे बजवाय । पहुंचो दंडक वन में आय ॥६००॥
सुनि के शब्द सैन को सिया । भय मानी अति अपने जिया ॥
सो लपिटाय राम कों गई । सभय कंठ सो वाणी चई ॥६०१॥
जे धावत आवत हैं कौन । देखो देखो आवत जौन ॥
सभय प्रिया देखी रघुराय । महा धीर्य ताकों बँधवाय ॥६०२॥
अकि पच्छिन को शब्द महान । एम विचार करत बुधिवान ॥
दीरघ सिंहनाद है कोय । किधौं समुद्र गर्जना होय ॥६०३॥
अकि पच्छिन को शब्द महान । पूरित दीखि परत असमान ॥
तब सीता सों कहत पुकार । अहो प्राण प्यारी गुणधार ॥६०४॥

ये पक्षी हैं दुष्ट महान । धनु टंकोर यकी बुधिवान ॥
देत भजाये इन्हें अधार। तू मति मनमें करे विचार॥६०५॥
इतने सेना आई तीर । नाना आयुध धारें धीर ॥
देखि राम पुनि सोचत गात। यहे देव नंदीश्वर जात ॥६०६॥
अथवा बंस विडा में सही । मनुष मारि लक्ष्मण अखि लई ॥
अकि वह कन्या वनि के हाल । आई हुती कुशीली बाल॥६०७॥
ताके पेरे निज सामंत । ऐसे मनमें समझि तुरंत ॥
धनुष बाण की ओर निहारि। पहिरन लगे सनाह सम्हारि॥६०८॥
तब लक्ष्मण बोले हे नाथ। आपन रहो जानकी साथ ॥
मैं शत्रुन के सन्मुख जाय। तिन प्रति युद्ध करों अधिकाय॥६०९॥
जो मो भीर परेगी देव। सिंहनाद करि हों मैं एव ॥
तब प्रभु करियो आप सहाय। अहो नाथ रघुवर रघुराय ॥६१०॥
ऐसे कहि तब पहरि सनाह । लियो धनुष मन परम उछाह ॥
पीताम्बर धारे वर वीर। अंजन गिरि सम श्याम शरीर॥६११॥
जैसे सिंह गजन पर जाय । त्यों चालो लक्ष्मण रिस खाय ॥
नैन लाल फरके सब अंग । अधर डसत लक्ष्मण मनरंग ॥६१२॥
कालरूप पहुंचो ततकाल । जाय सेन में करत जुहार ॥
आगे बढ़ो न पग भर कोय। ठाढ़े रहे वहां ही लोय ॥६१३॥
सुनि के शूर तासु ललकार। देखन लगे सबै ता वार ॥
रूप रंग अरु शूर बताई । देखि रहे अचिरज मन ल्याई ।६१४।

दोहा।

धनुष धरे शक्ती धरे, धारे खड्ग प्रचंड ।
वज्रदंड धरि चतुर भुज, शोभित अति बलवंड।६१५।
चौंकि उठे सब गगन चर, मनमें करत विचार।
यह एकाकी निडर नर, को है टोकन हार ।६१६।

त्रोटक छन्द ।

तब जान गयो अपने मनमें । इन सम्बुक मार लियो वनमें ॥
वह खड्ग धरे अपने करमें । अति वोर भयानक ना भरमें ।६१७।
यह आन सबे मन क्रोध भयो । इक वार सबे मिलि क्रोध ठयो ॥
वरछी शकती तिरशूल गदा । फरसी अरु सायक यष्टि मुदा ।६१८।
इन आदिक शस्त्रन की वरषा । वरषावत भें नभ ते सरसा ॥
निज बानन सो सव काट दिये । अरु मारि सवे दह पट्ट किये ।६१९।
लक्ष्मीश महा रस वीर भरे । चहुंधा विचरें कर खड्ग धरे ॥
अकले हरि ने सव सैन तहा । निचटाय दई करि युद्ध महा ।६२०।
गज सूंड परे हैं सूड डरे । कटि वीरन के वहु रुंड परे ॥
विन होश भये नभचर सगरे । चहुं ओर फिरें वगरे वगरे ।६२१।
यह औसर में सुनि लंकपती । मुख दूत यकी सब बात हुती ॥
अति शोकित भा पुनि क्रोधित भा। निज पुष्पक यान सजावत भा ६२२
अति शीघ्र चलो नभ मारग से। अति वीर महा गुण सागर सो ॥
भृकुटी चढ़ि वंक रही धनु सी। सब बात गने मनमें अनु सी।६२३।
तब आय विमान कढ़ो जिह ठा। सिय राम विराजत हैं तिह ठा ॥
लखि रूप अनूपम सीय तनो। उदवेगित भा चित माहिं घनो।६२४।
सब सो गुरु क्रोध विलाय गयो। तब पीडत ताहि अनंग भयो ॥
मनमें यह शोच करे अपने। विन यह त्रिय के सुख ना सपने।६२५।
किहू विधि याहि करों अपनी । मनमें यह सोचव लंक धनी ॥
अरु या विन इन्द्र तनी लक्ष्मी। कछु ना कछु ना इस चित्त धसी।६२६।

दोहा।

निज विद्या अवलोकनी, ताहीं कही सुनाय ।
तुम लावो सुधि इन तनी, को है कहँ तें आय ।६२७।

सुनि के विद्या भेद तब, ता सों कही सुनाय।
यह रघुवर की नारि है, सीता नामा आय ।६२८।
लक्ष्मण रघु को अनुज जो, करन गयो संग्राम।
राम प्रतै यह कहि गयो, सो सुनिये अभिराम ।६२९।
जो कदाच मोपर कहूं, गाढो परसी आय।
सिंहनाद करि हों तबे, कीजो आप सहाय ॥६३०॥
इम विद्या के वचन सुनि, करत सिंह रव घोर।
तब रघुवर कर धनुष ले, चलन लगे ता ओर ॥६३१॥
तुरत जटायू को सिया, सौंपि गये रण आय।
विना कंथ की कामिनी, रक्षा कौन कराय ॥६३२॥
एकाकी लखि सीय कों, रावण लई उठाय।
ता विरिया अति क्रोध कर, लपटि जटायू जाय ॥६३३॥

सवैया ३१।

रावण उठाय सिया ले चलो अकाश माहिं देखि के जटायू ताके लागो पाछे धाय कै। चोचन सों जाको अंग जायके विदारि डारो पंखन सों फार डारो वसन बनाय के॥ महा युद्ध कीनो तब रावण विचारी मने हाथ की चपेट देय मारो रिस खाय के। पक्षी गिरो भूमि माहिं रही सुधि कछु नाहिं तब सो विमान हांकि चलो उमगाय के ॥६३५॥ जानि के हरण निज जानकी उदास भई मन में विचारे विधि कौन भांति करी है। हाय हाय राम अरु लक्ष्मण कहां गये कौन ये पुरुष दुष्ट येह मोहि हरी है ॥ रुदन महान करे अश्रु पात धार परे अंग को संकोचि रही परवश परीहै।

या ही बीच कारण कछुक विधि बनो आय विधना बनाई बात सोई विधि खरी है ॥६३५॥

दोहा ।

सिया रुदन सुनि गगन चर, ज्वलन जटी जा नाम ।
आयो ता छण निकट तसु, देख परी हरि वाम ॥६३६॥
मानि अचंभा कहत भा, अरे दुष्ट दश ग्रीव ।
जनक सुता जानत जगत, परघट विस्वा बीस ॥६३७॥
तैं किन लीने जात रे, कीने बात अलीक ।
तू नहिं जानत जानकी, जान जानकी ठीक ॥६३८॥
यह भामंडल की बहिन, मैं तिनको चर जान ।
मो आगे कित जायरे, इम कहि जुधो महान ॥६३९॥
कार्य विरोधी जानि मन, दशमुख बहुत रिसाय ।
खोंसि लई विद्या सकल, कीनो रंक बनाय ॥६४०॥
यह प्रति हारे अति प्रबल, ये सामान्य बल पाय ।
सिंह सामने नाग शिशु, कहु कब लों ठहराय ॥६४१॥
छोडि दियो तब गगन तें, विद्या परनि लगाय ।
तब वह कंबुक नग विषें, रहत भयो फल खाय ॥६४२॥
लेय गयो दशमुख सिया, अपने घर के पास ।
नंदन वन सम वन विषें, वृक्ष अशोक प्रकास ॥६४३॥
ता तल राखी जानकी, आप गयो निज थान ।
मन सीता के संग लगो, और न सूझत काम ॥६४४॥
धारि आखडी मन विषें, करत राम पद ध्यान ।
जब लग मिले न नाथ सुधि, तब लग खान न पान ॥६४५॥

सीता के मन की दशा, को जाने मनरंग।
के जाने सर्वज्ञ वह, के जाने शिव अंग ॥६४६॥
मृग सों बिछुरी मृगी ज्यों, काल न जानत जात।
कित चंदा कित चांदनी, कित रजनी परभात ॥६४७॥
एक चित्त भरतार में, जात न दूजी ओर।
चंद चकोरी सी दशा, करि बैठी इक ठोर ॥६४८॥
यहां राम धनु बाण ले, पहुंचत समर मझार।
मुकुट धरे कुंडल धरे, पहिरे मुक्तामाल ॥६४९॥
लक्ष्मण लखि रघुनाथ को, कहन लगे यह बात।
क्यों आये प्रभु रण विषें, छांडि सिया मृदु गात ॥६५०॥
राम कही हे वत्स सुनि, कीनो तुनि हरि नाद।
सो सुनि मैं आयो यहां, करिके मन विश्वास ॥६५१॥
मैं नहिं कीनो नाद हरि, तुमें छलो कोइ आय।
ह्यां दुष्टात्मा हैं घनें, देखो जलदी जाय ॥६५२॥
साहस लखि लक्ष्मण तनो, लौटि परे रघुराय।
ह्यां देखें तो सिय नहीं, ना ह्यां लखो जटाय ॥६५३॥
भे दुचिते रघु तिलक तव, मन में करत विचार।
कुत्र गई कैसी भई, जनक सुता अविकार ॥६५४॥
इत उत तब देखन लगे, सिया न देखी राम।
देखें तो पक्षी परो, अर्द्ध मृतक इक ठाम ॥६५५॥
अति व्याकुलता राम के, होत भई ता वार।
पक्षी के ढिग जाय के, दियो मंत्र णवकार ॥६५६॥
सुनत मंत्र णवकार के, आराधन आराधि।
मरि जटायु स्वर्ग गयो, मन में धारि समाधि ॥६५७॥

चौपाई।

पक्षी मरे पिछारी राम। मूर्छा खाय गिरे इक ठाम॥
रही सुधि तन मन की नाहिं। व्याकुल परे भूमि के माहिं।६५८।
मूर्छा खुली जगे तब राम। हा सीता हा सीता बाम॥
तू कित गई छांडि वन मोहि। ऐसी बात न चहिये तोहि॥६५९॥
अब इत आय दरश दे मोय। बिन कारण किम क्रोध करोय॥
मेरो दोष न चित कछु धरे। तो बिन मेरे दुख विस्तरे॥६६०॥
विधि वश भूलि गये सब ज्ञान। रघुवर से नर भये अजान॥
अँसुवा टपकि टपकि भू परे। उठि बैठे पुनि गिरि गिरि परे॥६६१॥
हा सीता हा सीता करै। वन में इकले ढूंढत फिरै॥
वृक्ष वृक्ष पर कहत पुकारि। तुम कहुं देखो जनक दुलारि॥६६२॥
कोई खबर हमारी लेहु। सिया तनी सुधि हमको देहु॥
कहुं इत डोलैं कहुं उत जाय। एक क्षणक कहुं थिर न रहाय॥६६३॥
डूबे शोक उदधि के मांहिं। निज की खबर रही कछु नाहिं॥
विरहा अग्नि रही तन छाय। को सीता बिन सके बुझाय॥६६४॥
सब बन ढूंढि फिरे रघुराय पूछि फिरे सबको अधिकाय॥
लखो न सीता पयो न खोज। तब मुरझायो बदन सरोज॥६६५॥
करत विलाप क्रोध मन कियो। धनुष उठाय हाथ में लियो।
फिरच चढ़ाय करी टंकोर। बनके माहिं भयो अति शोर॥६६६॥
डरपि गये सारे वन जीव। थरहर कांपन लगो शरीर॥
ऐसे भ्रमण करत चहुं ओर। सीता लखी न काहू छोर॥६६ ॥
लौटि थान पर आये राम। सिय सिय करें और नहिं काम॥
धरि धनु बाण भूमि पर परे। नाना विधि संकट मन धरे॥६६८॥
अब यह कथा गई वह छोर। जित लक्ष्मण रण करि घन घोर॥
तावत एक विराधित नाम। विद्याधर आयो अभिराम॥६६९॥

हरि को नमस्कार तब कियो। लक्ष्मण दृष्टि मात्र लखि लियो॥
खडे रहो मम पीठि पछार। सुनि वच खग बोलो ता वार॥६७०॥
अहो नाथ खरदूषण जौन। मेरो अति वैरी है तौन॥
तासों आप करो संग्राम। मो सों सब सेना सों काम॥६७१॥
ऐसे कहि सेना पर परो। वहां विराधित अति रण करो॥
तब लक्ष्मण खरदूषण साथ। लरन लगो लेके धनु हाथ॥६७२॥
खरदूषण वैरी को देख। क्रोध भरे वच कहत विशेष॥
रे पापी दुरचारी नीच। मेरे हाथ लिखी तो मीच॥६७३॥
विन अपराध पुत्र मो हनो। दुख दीनो कान्ता कों घनो॥
अब मो दृष्टि परो है आय। मो ते बच करि तूं कहँ जाय॥६७४॥
ऐसे कहि करि शस्त्र प्रहार। करत भयो नाना परकार॥
लक्ष्मणने विरथा सब किये। निज ढिंग तक आवन नहिं दिये॥६७५॥
तब हरि धनुष बाण संधान। तकि तकि करि मारो सो विमान॥
रथ सों रहित कियो ता घरी। तोरो धनुष पताका हरी॥६७६॥
प्रभा रहित तब कीनो ताहि। क्रोधित वंत भयो बहु भाहि॥
परते भूमि क्रोध अति कियो। खड्ग लेय लक्ष्मण पर परयो।६७७।
ले लक्ष्मण हू सूरज हास्य। सन्मुख भयो करत उपहास्य॥
नाना विधि नाना हथियार। मारन लगे सम्हार सम्हार॥६७८॥
जुधे परस्पर दोनो वीर। तहां युद्ध कीनो गंभीर॥
पुष्प वृष्टि तब भई अपार। धन्य धन्य सुर करत अपार॥६७९॥

गीतिका छन्द।

तब तमकि श्रीधर ले सितावी खड्ग दृढ़ कर में लियो।
शिर छेदि खरदूषण तनो वि वि खंड करि करि डारियो॥
लखि मृतक स्वामी सकल सेना सवे भाजी सो तवे।
यह ठीक बिन दुलहा बराती तनक नहिं शोभा फवे॥६८०॥

सब भजत सेना लखी लक्ष्मण अभय दान दियो तहां ।
ले के विराधित साथ अपने राम ढिंग आयो जहां ॥
लखि रूप औरे परे भू पर देखि ततक्षण बोलियो ।
हे दयासिन्धु कृपालु रघुवर शयन किम भू पर कियो ॥६८१॥
अरु सिया कित यह कहो उठि तब चितै रघुवर ने दियो ।
लखि लछन रघुकुल तिलक उठि लपिटाय मस्तक चूमियो ॥
हे वत्स कुल भूषण चिरंजिव शत्रु हनि आयो यहां ।
कर फेरि पीठी ठोंकि रघुपति रुदन करि बोले तहां ॥६८२॥
हे वत्स सिय हम लखी नाहीं हेरि वन हारे फिरे ।
नग नगन प्रति पुनि तटनि तट भ्रमते यहां आये गिरे ॥
नहिं खोज लागो गई कितधौं कौन के फंदे परी ।
अब उदय आई हमें भारी अति असाता की घरी ॥६८३॥
कहि राम यह विधि खाय मूर्छा होश विन धरती परे ।
तब देखि लक्ष्मण भये आकुल सरस जल नयना भरे ॥
विलखाय चित अति रुदन किय वह व्यथा मनरंग कौन पे ।
कहि जात सारी कौन कवि अस विदित भू पर जौन पे ॥६८४॥
तब तक विराधित आय ता थल रुदित लक्ष्मण सों कही ।
मत करो शोच विचार प्रभु धीरज बँधायो राम ही ॥
इतने हि श्री रघुनाथ की मूर्छा खुली बोले तबै ।
यह कौन लक्ष्मण पुरुष है कहि दीन सब ब्योरा जबै ॥६८५॥
मन समझि सीतानाथ बोले हा सिया हा हा सिया ।
मम दरश दे चिरकाल हुव हे जानकी मन की प्रिया ॥
लखि लछन या विधि राम व्याकुल जोरि कर बोले तहां ।
हे नाथ काहू दुष्ट ने सीता हरण कीनो यहां ॥६८६॥

अब धैर्य धारे बनत स्वामी और भांति नहीं बने ।
धीरज सहाई विपत माहीं विदुष जन ऐसे भने ॥
मति करो शोच सम्हार कीजे सकल व्याकुलता हरो ।
कहँ जाय सीता हेरि लै हैं यतन करिये सो करो ॥६८७॥
देखो विराधित उदय कारण कहा सोची कह भई ।
नहिं ऊंच नोंच विचार तिनके निर्विवेकी निर्दई ॥
ये राम राजा विना सीता विरह सागर में परे ।
इक पलक साता लहत नाहीं कौन विधि दुख निरवरे ॥६८८॥
सुन करि विराधित अधो मुख करि मौन कछु करि ह्वै रहे ।
पुनि सोचि अनुचर टेरि करि समझाय तिनसों कहत हे ॥
तुम जाउ दश दिश सवन मिलि करि खोज देवें ही बनें ।
करि ठोक आनो तुरत ही पर और बात नहीं गने ॥६८९॥
चर धाइ चाले दिशा विदिशा भ्रमे मन वच काय के ।
सर सरित परवत गुफा कोटर सबे हेरे जाय के ॥
कहुं लगो सिय को खोज नाहीं हेरि हारे सो तवे ।
निज नाथ ढिंग तब उलटि आये कहि दियो व्यौरा सबे ॥६९०॥
सुनि मालिन मुख ह्वै तब विराधित शोच सागर में परो ।
जमुहाय लेत उसांस भारी हृदय दुख भारी करो ॥
क्षण सोचि समझि विचारि स विनय राम प्रति विनती करी ।
हे नाथ करुणासिन्धु साहिब सुनो सांची बातरी ॥६९१॥
यह विजन वन अति क्रूर स्वामी चरत वनचर क्रूर है ।
अरु कुथल थल नहिं वसन लायक दुखद सब भर पूर है ॥
रघुनाथ तातें कृपा करि मो सदन आप सिधारिये ।
ह्वै थिर तहां तब जनक तनुजा तनो भेद लगाइये ॥६९२॥

सुनि विनय युत इम बचन रघुवर लछन तन हेरे जवे ।
लखि लछन रघुवर तब सितावी गमन की ठानी तवे ॥
तब तुरत ही सो वह विराधित ले गयो निज थान ही ।
पाताल लंका थान जाको रहत भे सिय ध्यान ही ॥६८३॥

दोहा ।

रघुवर सीता विन तहां, रहत न परत करार ।
मन में सोचत ही रहे, निशि दिन सिया पुकार ॥६८४॥

कुण्डलिया ।

यह विधि रघुवर सिया विन, रहत भये वर जोर ।
तब लग इक कथनी भई, किहकू पुर की ओर ॥
किहकू पुर की ओर एक विद्याधर आयो ।
धरि सुग्रीव को रूप आय शुभ नगर समायो ॥
आनमान सुग्रीव बनो वैसी विद्या निधि ।
गयो सुतारा महल माहिं पैठो सो यह विधि ॥६८५॥
गोप्ये सुतारा सों कही, वार्ता सकल खगेश ।
चालि माहिं अंतर कछू, लखत भई लवलेश ॥
लखत भई लवलेश तुरंत कपाट दिवाई ।
बैठि रही घर माझ कछुक दुविधा सी खाई ॥
बैठी जो मन गांठि कौन विधि होय सो लोपित ।
तब सो वह प्रिय बात मनै मन राखी गोपित ॥६८६॥
ता विरिया सुग्रीव हू, वन ते आयो भौन ।
गयो सुतारा महल में, देखि कही तू कौन ॥

देखि कहो तूं कौन कही सुग्रीव नाम मो।
याहू ने सुग्रीव कही सो चलो धाम मो॥
बरजि रहो सुग्रीव करी भिरिवे की किरिया।
देखि सुतारा चरित एक सोची ता विरिया॥६८७॥
जानो सादृश रूप रंग, सदृश वार सम हार।
सम चित उन सम बारता, सम काया निरधार॥
सम काया निरधार जानि वह सती सुतारा।
परी विकल्प समुद्र माहिं कछु पार न वारा॥
करन लगी संताप कौन विधि नाथ पिछाने।
बड़े कष्ट की बात भई ता मनमें जाने॥६८८॥
तब निज लोग बुलाय के, कही बात समझाय।
हो प्रधान इन दोउन को, राखो बाहिर जाय॥
राखो बाहिर जाय भूलि परतीति न कीजे।
जब तक होय न न्याय कंथ पहिचान न लीजे॥
सुनि मंत्री यह भांति दोउन सों बात कही जब।
करी तबे परमाण करे डेरा बाहिर तब॥६८९॥
हूवो अंगद एक ढिंग, इक तट सुत सुग्रीव।
दोय तरफ दोनो जने, निवसत भये सदीव॥
निवसत भये सदीव लखत कछु पार न पावे।
सोचि सोचि मन माहिं रैन दिन एम गमावे॥
अरु सुग्रीव महान विरह सागर में डूबो।
मन ही मन अति खीजि खीजि चिंतातुर हूवो॥६९०॥

छप्पय छन्द।

नेक हु बल नहिं चलो चलो नहिं छल ता केरो।
त्रिय विन भो अति दीन मीन जिम जल नहिं हेरो॥
मुख मलीन अरु कृषित देह दुखिया मन माहीं।
कीने बहुत उपाय व्यथा कोउ मेटि न पाई॥
तब कपीश यह कोपि सो गयो विराधित पास जब।
उन लियो बहुत आदर सहित कीनो बहु सन्मान सब ॥७०१॥

अडिल्ल।

पुनि पूछी हे कपिध्वज कहँ किरपा करी। आये सो मम ग्रेह धन्य मेरी घरी॥ तब कपीश निज दुःख तनी बातें जिती। कहीं विराधित पास मान तजि के तिती ॥७०२॥ सुनि के मन की बात विचारत एम जू। ये मम दुखिया दोनो कहिये केम जू॥ तब सो विराधित बोलो रघुवर की त्रिया। हरी गई कछु दिन भे शील-वती सिया ॥७०३॥ ताके विरह प्रभाव माहिं डूबे रहें। कछुक सुहात न बात तिन्हें कैसे कहें॥ महा कष्ट की बात कही कछु जात ना। अरु कछु उनकी कृपा अगारू बात ना ॥७०४॥ दृष्टि मात्र दुख दूर करन जनके सबे। यह कौतक उनमान बात कहिये अबे॥ मो से दुखिया सुखया करत न वार की। कपिध्वज सुनि यह बात कही निरधार की ॥७०५॥ बहुरि दिखावैं राम मोहि मेरी प्रिया। सांच कहत हों सुनो मोहि ऐसी क्रिया॥ जो न सप्त दिन माहिं सिया सुध लावहूं। ज्वलन कुंड के माहिं जियत जरि जावहूं ॥७०६॥ निपट कठिन प्रण करिके रघुवर पास ही। गयो विराधित साथ धरे मन आस ही॥ काभपाल को रूप अनूपम देख के। आनंद पूर्वक करत प्रणाम विशेष के ॥७०७॥

दोहा।

विनय वचन कहि राम सों, कहकूपुर ले जाय।
नगर बाह्य डेरा किये, रण को चलि उमगाय ॥७०८॥
भेष धरे सुग्रीव को, सो भी रण सजि आय।
युद्ध विषें श्रीराम ने, हतो दुष्ट दुखदाय ॥७०९॥

चौपाई।

तब कपीश मन हर्षित भयो। देखि सुतारा सब दुख गयो ॥
निज पुत्री कपिधीश जो तनी। रघुपति कों परणाई घनी ॥७१०॥
ताकों परणि हरषि नहिं भयो। सिया बिना सुख रंच न ठयो ॥
एक दिवस अति शोकित होय। रुदन करत अति ही दुख जोय ॥७११॥
लक्ष्मण लखि रघुपति की ओर। सहि न सकें रघुपति दुख घोर ॥
खड्ग हाथ धरि आयो तहां। राजद्वार कपिध्वज को जहां ॥७१२॥
सकल सभा जन क्षोभित भये। लक्ष्मण ओर जो निरखत भये ॥
देखि सकल जन लक्ष्मण रूप। कंपित बदन थर हरो भूप ॥७१३॥
अर्घ पात दे दोउ कर जोर। विनय बचन करि करत निहोर ॥
तब लक्ष्मण बच भाषत भयो। रे सुग्रीव कृतघ्नी ठयो ॥७१४॥
रघुपति की सुधि सब बिसराय। त्रिया पास करि अति लुभिआय ॥
जहँ तुझ बैरी पठयो राम। अब तुझ भेजि देउँ यम धाम ॥७१५॥
कंपित बदन पसेव बहाय। थर हर कंपी सिगरी काय ॥
तब सुग्रीव नृपति बीनयो। मैं पापी सुधि विसरत भयो ॥७१६॥
क्षमा करो मुझ दीन निहारि। अब सुधि लाउं रघुपति नारि ॥
सुभट अनेक दशो दिशि माहि। पठये सिय सुधि लेन उमाहि ॥७१७॥
आपन चढ़ि सुग्रीव विमान। चलत भये मन आनंद ठान ॥
सब दिशि देखे नजर पसार। नहीं लखी सीता गुणधार ॥७१८॥

कंबुक परबत पर सुग्रीव । जाय पहूंचो भ्रमत अतीव ॥
रतनजटी को लखि तसु पूछ । कौन अवस्था भई अबूझ ॥७१८॥
सिया हरण रावण की कथा । भाषत भयो यथारथ यथा ॥
तब सुग्रीब हरष चित होय । रघुवर पास तासु ले सोय ॥७२०॥
करि प्रणाम बैठो कर जोर । विनय सहित बच करत निहोर ॥
सिया तनी हरने की बात । विधि-पूर्वक भाषी अवदात ॥७२१॥
लंकपती रावण घर सिया । निश्चय रघुवर जानि सो लिया ॥

अडिल्ल ।

दशरथ नंदन बैन गरजि उच्चारियो । कहां लंक केतेक दूर सुझ भाखियो ॥ तब संत्रिन को आदि सभा चक्रत भई । मौन गही दृशनन बिच अँगुरी तिन दई ॥७२२॥ तब सीतापति इनको निरबल जान के । कहत भये रिस खाय सो भृकुटी कमान के ॥ भुजबल समुद-तिराय लंकपति मारि हों। जनक सुता को सणक माहिं ले आइ हों ॥७२३॥

सोरठा ।

तव मंत्री हरषाय, राम प्रतै ऐसे कही ।
सीता लेन उपाय, कै रावण सो रारि किय ॥७२४॥

चौपाई ।

तव लक्ष्मण बोले सुसिक्याय । हम नहिं रार करें दुखदाय ॥
फकत राम पतनी सों काम । यह उपाय तुम करु अभिराम ॥७२५॥

दोहा ।

जम्बु नंदि को आदि दे, मंत्री बचन उचार ।
कहत भये रघुनाथ सों, सुनि लीजे बच सार ॥७२६॥
रावण पूछी नाथ सों, नंतवीर्य सुखदाय ।
मृत्यु हमारी कौन विधि, सो कहिये समझाय ॥७२७॥

चौपाई।

कोटि शिला जो लेय उठाय। ता कर ते मरनो ठहराय ॥
तब लक्ष्मण बोले विहसाय। यात्रा हेतु चलो हरषाय ॥७२९॥
सब मिलि कोटि शिला ढिग गये। पूजन भजन करत उमगये ॥
लक्ष्मण कोटि शिला ढिंग जाय। पंच परम गुरु शीस नवाय ।७२८।
गोड प्रमाण शिला को उठाय। चकृत भये देखि नरराय ॥
पुष्पवृष्टि देवन ने करी। जय जय कार शब्द उच्चरी ॥७३०॥
यात्रा करि आये निज थान। करत विचार अनेक प्रमान ॥
कछुक विकलता मन की गई। कारज सिद्धि होय सुख मई ॥७३१॥
तब मंत्रिन मिलि मतो कराय। भेजो दूत चतुर मन ल्याय ॥
अंजनि सुत लायक यह काम। जाय दूत पवनञ्जय धाम ॥७३२॥

अडिल्ल।

दूत सभा के मध्य जाय हरषाय के। नमस्कार करि पत्र दियो हरषाय के ॥ बांचि पत्र हनुमान हरष मन में भयो। ह्वै विमान आरूढ़ शीघ्र गति सो गयो ॥७३३॥ आवत लखि हनुमान राय सुग्रीव जू। जाय सामने ल्याय अनंद बढ़ाय जू ॥ कुशल क्षेम की पूछि बात पाछे कही। रघुवर की सब कथा बांचि आनंद लही ॥७३४॥

दोहा।

हनूमान सुग्रीव मिलि, चले राम के पास।
जाय मिले दोउ वीर कों, बचन परस्पर भास ॥७३५॥

चौपाई।

तब हनुमान कहे कर जोर। विनय सहित बहु करत निहोर ॥
हे रघुनाथ हुकुम जो होय। सो कारज करिहों जिय जोय ॥७३६॥
राम कहें सिय की सुधि ल्याय। और बात नहिं हमें सुहाय ॥
तब हनुमान प्रणाम जो करी। लंक चलन की मनशा धरी ।७३७।

तब श्रीराम मुद्रिका दई। सो प्रमाद वश हरनो भई ॥
भो प्यारी अब धीरज धरो। धर्म सहाय न्याय दुख हरो ॥७३८॥
इत्यादिक शुभ वचन बनाय। जनक सुता कों द्यो समझाय ॥
ता अवसर सुग्रीव नरेश। अमृत सम वच भाषत वेश ॥७३९॥
सावधान लंका मधि जाय। संधि कराय सिया ले आय ॥
मंत्र विभीषण प्रति इम करो। रार न होय कार्य अनुसरो ॥७४०॥
पवनपूत इम वचन सुनेय। तत्त्व सार वच हिये धरेय ॥
ओं नमः सिद्धेभ्यः उच्चरो। प्रमुदित वदन गमन तिन करो ॥७४१॥
मारग में इक कारण भयो। नाना ग्रेह नजरि परि गयो ॥
राय महेन्द्र जासु को नाम। मो माता कीनो अपमान ॥७४२॥
अब मैं भुज बल करि ता जीति। नाम प्रकाशन की यह रीति ॥
रण वादित्र बजाये जाय। सुनत शब्द नृप आयो धाय ॥७४३॥
दोउअन महा युद्ध विकराल। भयो परस्पर अति वेहाल ॥
तब महेन्द्र हारो तिह बार। बांधि लियो हनुमंत कुमार ॥७४४॥
फेरि विनय नाना की करी। नेह सहित तिन आदर धरी ॥
तहँ सों कूंच करो हनुमंत। आगे और सुनो विरतंत ॥७४५॥
दधिमुख नगर जाय हनुमान। वन मधि धरें मुनीश्वर ध्यान ॥
लखत पवनसुत ता ढिंग जाय। अग्नि जरत लखि के मुनिराय ॥७४६॥
मुनि उपसर्ग निवारण काज। जलधारा करि हर्ष समाज ॥
दूर कियो उपसर्ग तुरंत। अशुभ करम की हानि करंत ॥७४७॥

सवैया ३१।

ध्यान के धरैया कर्म रोग के हरैया मोह शत्रु कै जितैया निज रूप में समायो है। मार के मरैया सुविचार के करैया शुद्ध ध्यान के धरैया जग नायक कहायो है ॥ कर्म के नशैया राग द्वेष के जितैया शुद्ध मारग चलैया भव्य जीवन सुहायो है। मोक्ष के

जवैया पर वस्तु के तजैया निज ब्रह्म के भजैया एक आत्मा लुभायो है ॥७४८॥

पद्धडी छन्द ।

जय दीन दयालु कृपालु नमो । करुणा कर नाथ सनाथ नमो ॥
अरि मोह महा रिपु टारन हो। वसु कर्म कठोर विदारन हो ॥७४९॥
ममता रजनी हर सूर नमो । भव जीवन के सुख पूर नमो ॥
गुण धारक रत्न करंड नमो । समता रस पूरण संत नमो ॥७५०॥
प्रभु शील कृपाण लिये कर में । व्यभचार पछार दियो रण में ॥
प्रभु सूरति नाथ भली दरसी । तुम देखत पाप सबै जरसी ॥७५१॥

दोहा ।

गुरु स्तुति हनुमंत करि, बार बार शिर नाय ।
ता अवसर कन्या चतुर, आवत आनंद पाय ॥७५२॥
कन्या लखि हनुमंत तब, पूछत तुम किह काज ।
वन प्रवेश कीनो महा, सो कहिये समभाय ॥७५३॥

चौपाई ।

दधिमुख राय तनी हम सुता। विद्या साधन कारण युता ॥
अंगारक वैरी मम तनो । करि उपसर्ग अग्नि को घनो ॥७५४॥
तुम उपसर्ग निवारण आय । मुनि बचाय विद्या सिध भाय ॥
ता अवसर दधिमुख आइयो । कामदेव लखि आनंद हियो ॥७५५॥
अंगारक किम बैर कराय । अग्नि लगाय दई दुखदाय ॥
इम हनुमान पूछियो जबै । तब वृत्तान्त कहे नृप सबै ॥७५६॥
चार सुता मेरे गुण भरी । अंगारक तिन याचन करी ।
मैं निमित्ति कों पूछि सुभाय । मम पुत्री वर कौन सहाय ॥७५७॥
साहस गति को मारन हार । तुम पुत्री को वर गुणधार ॥
श्री शैलेश मधुर वच कहे । आश तुम्हारी पूरण लहे ॥७५८॥

जनक सुता पति को सब बात । भाषी पवनपूत विख्यात ॥
रघुपति पास पठायो राय । पुत्री सुत चाले। हरषाय ॥७५९॥
वन परवत उलँघत ही वीर । आय पहूँचो लंका तीर ॥
मायामई यंत्र को जवे । दुःप्रवेश जाने। तिन तवे ॥७६०॥
मायामई यंत्र को फोरि । विद्या भाज गई मुख मोरि ॥
ताके। रक्षक क्रोधित होय । सेना सहित आइयो सोय ॥७६१॥
महा घोर कीनो संग्राम । वज्रवक्त्र पहुंचो यम धाम ॥
ता पुत्री लंका सुंदरी । पिता मरण लखि के दुख भरी ॥७६२॥
लाल वरण सिंदूर समान । लोचन भृकुटी करत कमान ॥
क्रोधवंत मनु यम की सुता । आय पहूंची दल संयुता ॥७६३॥
घेरि लियो अंजनि को लाल । छांडत वाण भई असराल ॥
दोउअन माहिं युद्ध अति भयो । तावत विधना औरे ठयो ॥७६४॥
कामदेव को देखि सरूप । काम तने। उमगो मनु कूप ॥
विह्वल भई वांण ले हाथ । पत्र लगाय चलायो साथ ॥७६५॥
हनूमान तसु पत्र निहार । बांचत भयो हिये सुखकार ॥
काम वाण करि विह्वल भयो । धनुष डारि ताके ढिंग गयो ॥७६६॥

अडिल्ल ।

अहो नाथ मुझ देव जीति नाहीं सके । सो तुम जीते। मैन वाण झकझोर के ॥ तव हनुमान कुमार कंठ सो लगाय के । स-धुर मधुर वच भाषत कंठ लगाय के ॥७६७॥ अहो नाथ किह का-रण लंक सिधारियो । तुम सनेह रावण को पूर्व चितारियो ॥ भाषत बचन रसाल चित्त में धारियो । राम सिया की बात स-कल समझाइयो ॥७६८॥ रावण को समझाय सिया ले आय के । दशरथ नंदन नाथ तिन्हें सौंपाय के ॥ ह्वै निचिंत तुम साथ भोग विलसें घने । धीरज धारि सुनारि वैन ऐसे भने ॥७६९॥

दोहा ।

कटक राखि ता निकट हो, चले राम के काज ।
सकल संघ मंगल करण, सुमिरंत श्री जिनराज ॥७७०॥

चौपाई ।

तब शैलेश सिया ढिंग जाय । देखि सरूप अधिक सुखदाय ॥
पिय वियोग करि बदन मलीन । अंग शिथिल बैठी छवि छीन ।७७१।
कर कपोल धरि मन सोचंत । किह विधि राम मिलें गुणवंत ॥
ऐसी सीता लखि हनुमान । डारि मुद्रिका ता ढिग जान ॥७७२॥
आप रहो छिपि वृक्ष कि ओर । सीता नजरि गई तिह ठोर ॥
लखि मुद्रिका उठी भहराय । लई उठाय प्रेम रस भाय ॥७७३॥
यह मुंदरी मो बालम तनी । किस विधि कौन भांति आमनी ॥
हे मुंदरी के लावन हार । दर्शन देउ परम सुखकार ॥७७४॥
आयो पवन पूत हरषाय । विनय सहित बैठो ढिंग जाय ॥
प्रमुदित बदन सिया सुखदाय । कहत भयो अति आनंद पाय ।७७५।
यह मुंदरी रघुनंदन तनी । मैं लायो तुम्ह सुखदायनी ॥
अहो दूत मुझ प्रीतम तनो । किह कारण तुम्ह मिलनो बनो ॥७७६॥
राम मिलन को कारण सबें । भाषो भिन्न भिन्न सो सबें ॥
ता अवसर मंदोदरि आद । आई रानी धरत विषाद ॥७७७॥
मंदोदरि लखि करि हनुमान । क्रोधवंत ह्वै धरत गुमान ॥
हे हनुमान ऊंच कुल पाय । नीच पुरुष की सेव कराय ।७७८।
भूमि गोचरी को ह्वै दूत । आई लाज न भयो कपूत ॥
हांसी करन लगी सब बाल । अंचल मुख में दे दरहाल ।७७९।

तब हनुमान सो उत्तर दियो । दूती ह्वे तुम क्यों आइयो ।
तुम पटरानी भैंस समान । तेरो पति दुरमति को ठाम ।७८०।
पर त्रिय चोर अयश की खानि । यह विपरीत सुयश की हानि ।
इम कहि लज्जित ह्वै ततकाल । रावण की भाजीं सब बाल ।७८१।
तब हनुमान सिया मति कही । लेउ अहार जो थिरता गही ।
करि प्रणाम रघुपति की नार। गयो पवनसुत करत विचार ।७८२।
जाय विभीषण महल मझार। बात कही सब हीं निरधार ॥
ईला नाम सखी कें हाथ। षटरस भोजन दीने साथ ।७८३।
पंच परम गुरु सुमिरन कियो । तब सीता ने भोजन कियो ॥
श्री शैलेश विभीषण ग्रेह । क्षुधा हरण तन पोषण येह ॥७८४॥
ले अहार पुनि सिय ढिंग जाय । गमन करन की अरज कराय ।
तब चूरामणि दे हनुमान । बचन अमिय सम मधुरी बान ॥७८५॥

अडिल्ल ।

यह चूरामणि लेय राम पर जायके । मो विनती कर जोरि कहो समझाय के ॥ हे दयालु मम हाल मिलो तुम आय के । अशुभ करम के योग परी इत आय के ॥७८६॥

चौपाई ।

रावण भ्रात विभीषण ग्रेह । जाय पवनसुत धारि सनेह ॥
अहो विभीषण ज्ञान भंडार । तुम कुल निर्मल यश अधिकार ॥७८७॥
रावण तीन खंड पति होय । हीन करम धारो किम जोय ॥
परनारी को संगम पाय । यह भव अपयश नरक लहाय ॥७८८॥
क्यों न प्रबोध बचन तुम कहो । दुर्मति छांडि सुयश कें लहो ॥
न्याय उलंघन कारण येह । रावण कें दुख दायक तेह ॥७८९॥

हे हनुमान बहुत हम कही। रावण हठ गहि छांडत नहीं॥
पाप बुद्धि छाई उर माय। परतिय लुब्ध भयो दुखदाय॥१८०॥
यह विधि बचन परस्पर कियो। न्याय सहित सुखदायक हियो॥
तब हनुमान पयानो कियो। रावण की दुर्मति जानियो॥१८१॥

अडिल्ल।

तब हनुमान विनय युत गमन कियो तहां। रावण का आ-राम सुघर आयो तहां॥ चंप चमेली कमल केतुकी मालती। इत्यादिक फल फूल शोभ विस्तारती॥१८२॥ ता अराम के वृक्ष फूल फल तोरियो। बन पालक विलखाय पुकारत आइयो॥ सभा सिंहासन लंकपती ढिंग जाय के। पवनपूत की बात कही समझाय कै॥१८३॥

नराच छन्द।

महान क्रोध धारि इन्द्रजीत का पठाइया। सो जाय नाग फांस डारि बांध के ले आइया॥ खड़ो सो पूत अंजनी का अंकना धराइया। सो देखि लंक के धनी कठोर बैन भाखिया॥१८४॥ अरे गवाँर तूं लवार दुष्ट कार यों कियो। सो भूमि गोचरीन सेव जन्म ते बिगारियो॥ अवार जाय याहि स्याहि मूखरा लगाय कै। गधा चढ़ाय नग्र में फिराय काढ़ि जाय कें॥१८५॥

चौपाई।

तब हनुमान बोल सुखिम्याय। तूं त्रिखंड पति सब सुखदाय॥
विधना मति तेरी हर लई। चौर करम करि परत्रिय लाई॥१८६॥
जो विधना दुर्द्धर दुख देय। ताकी मति पहले हरि लेय॥
इम कहि बंधन चलो तुडाय। ज्यों मुनि कर्म काटि शिव जाय।१८७।
चढ़ि बिमान कैहकूपुर जाय। राम लछन ढिंग पहुंचत भाय॥
जनक सुता का सब विरतंत। कहो यथारथ सकल तुरंत॥१८८॥

चूड़ामणि दे हाथ तुरंत। मनु सिय मिली शोच करि अंत ॥
पूछत वार वार श्री राम। मम पत्नी जीवित अभिराम ॥७९९॥
तुम गुण सुमिरत वारंवार। कै श्री पंच परम गुरु सार ॥
तब श्रीराम लछन की ओर। चितवंत भये नयन जल कोर ॥८००॥
तब लक्ष्मण बोले रिस खाय। रावण जीति सिया ले आय ॥
अहो भ्रात केतक यह बात। सत्य बचन धारो जिय तात ॥८०१॥
हे सुग्रीव विलंब न करो। रण के साज बाज विस्तरो ॥
राजन निकट पठावो दूत। ते आवें सेना संयूत ॥८०२॥
सिया भ्रात भामंडल पास। भेजो दूत पत्र दे हात ॥
जाय दूत तहँ प्रणमन करी। पत्र देत बांचत ता घरी ॥८०३॥
हरण सिया को जानो सवे। अरुण वरण दृग कीने तवे ॥
रण के साज बाज तैयार। होन लगे ततक्षण तिह वार ॥८०४॥
अब ह्यां रघुपति सैन सजाय। शुभ दिन चले सुमिर जिनराय ॥
चलत सगुन शुभ आनंददाय। भये सवन चित हरष बढ़ाय ॥८०५॥
लंक निकट पहुंचे हरषाय। तहां मिले भामंडल आय ॥
समाचार रावण ने सुने। बांदर वंशी आये घने ॥८०६॥

अडिल्ल।

रण समाज सुनि राय विभीषण आय के। रावण को शुभ बचन कहत समझाय के ॥ नहि मानी दुर बुद्धि जासु हियरे वसी। अशुभ करम के उदय बुद्धि सब ही नसी ॥८०७॥ इम सुनि बचन कठोर लंकपति गर्जियो। यह कायर कों सभा मध्य ते काढ़ियो ॥ यह अनीतिता देखि विभीषण बोलियो। अरे दुष्ट दुरबुद्धि राम तुझ मारियो ॥८०८॥

चौपाई।

तब मंत्रिन मिलि दोउ समझाय। निज निज थान पहूंचे जाय ॥
चले विभीषण सियपति पास। दूत पठायो रघुपति पास ॥८०९॥

राम विभीषण आगम तनी। अरज मिलन की सब तिन भनी॥
सब मंत्रिन मिलि मतो कराय। मिलो विभीषण सब सुखदाय॥८१०॥
मिले विभीषण अरु रघुराय। बढ़ो सनेह परम सुखदाय॥
सज्जन जन के देखत नैन। बढ़त सनेह होत जिय चैन॥८११॥

दोहा।

अब रण हेतु विचार करि, दोउ दल सजे अपार।
शूर वीर सब साजिया, आये रणहिं मझार॥८१२॥
प्रथम युद्ध रावण तने, सेनापति दोउ आय।
हस्त प्रहस्त प्रताप धरि, आये मान बधाय॥८१३॥
श्री रघुपति की सैन मधि, सेनापति दोउ वीर।
नल अरु नील प्रताप धर, आये साहस धीर॥८१४॥

अडिल्ल।

खड्ग बाण बरछी ले खड्ग फिरावतो। मार मार करि रण में आवत धावतो॥ खैंचि खैंचि करि बाण कमान लगावतो। खड्ग हाथमें बैरी ऊपर धावतो॥८१५॥ कै इक योधा काम आय धरती परे। ओठ डसत विकराल रूप करि के मरे॥ अरे शूर तैं मेरे सन्मुख आय के। कहां जाय तूं मेरे बाण बचायके॥ ८१६॥ अरुण वरण विकराल लाल करि नैन कों। पवनपूत अरि यूथ भजावत सैन कों॥ घने शूर चकचूर किये रण शूर ने। यह समान बलवान न दीखत पूर ने॥ ८१७॥ चिगी सैन लखि हस्त प्रहस्त सों आइयो। ता सन्मुख ह्वै नील भ्रात युत धाइयो॥ भयो युद्ध विकराल नील ने हस्त को। मस्तक छेदो मरण भयो दुखदाय को॥८१८॥ इस प्रकार सहनील प्रहस्त पछारिया। जीत लई अरि सैन सो बाजे वजाइया॥ श्री रघुचन्द्र अनंद मंद मुख अरि भयो। पुण्य पाप फल देखि प्रगट अघ त्यागियो॥८१९॥

दोहा।

पूरब पुण्य प्रभाव करि, जीत होय रण माहि।
तातें ऐसो जान करि, धर्म करो भवि आहि ॥८२०॥

अडिल्ल।

मरण सुनो लंकापति हस्त प्रहस्त को। क्रोधवंत विकराल लाल करि नयन को॥ बांदर बंशिन ऊपर ओठ चबाय के। करों सबै निर्मूल सो रण में जाय के ॥८२१॥

चौपाई।

इन्द्रजीत अरु मेघ कुमार। पिता प्रतै बोले मनहार ॥
अहो तात तुम आज्ञा पाय। क्षुद्र पुरुष कों बांधि लिआय ॥८२२॥
जो त्रण नख तें ही ऊपरे। करछी कौन उठावन करे ॥
जो रु श्वान गज ऊपर आय। कोप न करे शांति मन ल्याय ॥८२३॥
इम कहि चले दशानन पूत। नृप अनेक सेना संयूत ॥
रण आंगन में साहस धार। युद्ध करन कों भयो तयार ॥८२४॥

पद्धडी छन्द।

तब युद्ध निमित्त मिले सब ही। रण शूर तयार भये सब ही॥
किनही धरि बाण कमानन पे। तकि मारत शूर निशानन पे॥८२५॥
कितने कर चक्र गदा को लिये। तरवारन सों शिर काट दिये॥
कितने रण शूर सो घायल भे। तन लाल बरण दुखदायक भे॥८२६॥
इस भांति भयो रण भीषम सों। तहँ रावण पूत भयो यम सो॥
तब सैन दबी रघुवीर तनी। तहँ शूर जुझे गनती न गनी॥८२७॥
रण आंगन में कपिधीश गयो। शिय भ्रात भयो अति क्रोधित यो॥
नल नील रु आदि चले सब ही। घमसान भयो कछु पार नहीं॥८२८॥

अडिल्ल।

इन्द्रजीत इन सन्मुख रण में आइयो। नाग फांसि करि के सुग्रीव बँधाइयो॥ अरु भामंडल शक्ति हीन करि बांधियो। त-

तक्षण जाय बिभीषण राम पुकारियो ॥ ८२९ ॥ तिन प्रसाद ते ततक्षण फांसि ते छूटियो । इन्द्रजीत अरु मेघनाथ धावत भयो॥ तब श्री राम गरुडपति देव चितारियो । आय गरुड विद्या दे आनंद धारियो॥८३०॥ नाग फांसि ते रघुवर दोऊ सुत वांधियो। कुंभकरण को पकरि सितावी लाइयो ॥ यह वृत्तान्त सुनि ततक्षण रावण धाय के । घेरि लयो लक्ष्मण कों बाण चलाय के ॥८३१॥ भयो युद्ध घनघोर कहां तक वर्णिये । मो मति हीन अजान बाल सम जानिये ॥ शक्ती कर में धार दशानन क्रोध तें। लक्ष्मणको वक्षस्थल शक्ती भेद तें॥८३२॥ वज्रपात सम गिरो भूमि पर आय के । यह वृतांत सुनि रघुवर शीघ्र सिधाय के ॥ देखि मृतक सम रूप मोह वश ह्वै रह्यो । पुनि क्रोधित अति होय घेरि ताकों लयो ॥८३३॥

चौपाई ।

अरे चोर दशमुख बुधि हीन । तेरी आयु भई अब छीन ॥
तब रघुनाथ वाण कर लियो। रावण को तन घायल कियो॥८३४॥
राम बाण करि दशमुख वीर । भयो जर जरो सकल शरीर ॥
श्री रघुपति इम वैन उचारि। भ्रात दग्ध करि तब रण धारि॥८३५॥
दशमुख रण तजि घर को गयो। निज निज थान शूर सब भयो ॥
राम भ्रात की ओर निहार। हा हा शब्द करत दुखकार॥८३६॥
आय मूरछा खाय पछार । गिरो धरनि दुख कहत न पार ॥
तब शीतल उपचार कराय। उठो राम अति ही बिलखाय॥८३७॥
सकल नृपति मिलि धीर्य बँधाय । तुम भ्राता जीवे सुखदाय ॥
तब श्रीराम कहत हरषाय । भ्रात साथ हम हूं जरि जाय ॥८३८॥
हे स्वामी तुम भ्राता तनो । अल्प मृत्यु नहिं निश्चय गनो ॥
तब सब मिलि करि मतो कराय। वस्त्र सदन रचियो सुखदाय।८३९।

यतन सहित लक्ष्मन पधराय। निशा भई सब शोच कराय॥
जो निशि भीतर होय उपाय। प्रात भयो लक्ष्मणन रहाय॥८४०॥
तावत पुण्य उदय भयो आय। इक विद्याधर आयो धाय॥
भामंडल पुनि पूछत भयो। कौन अर्थ तुम आगम ठयो॥८४१॥
तब बोलो श्री रघुवर पास। दरश परस की लागी आस॥
अरु तुम चिन्ता लक्ष्मण तनी। सो उपाय करियो दुख हनी।८४२।
हर्षित बदन सदन ले गयो। राम निकट कर जोरत भयो॥
प्रभु चिंता तजिये निरधार। तुम भ्राता जीवे ततकार॥८४३॥
जो कछु कथा भरत ने भनी। नाम बिसिल्या पूरव तनी॥
लक्ष्मण तनी नियोगिन होय। पुण्यवंत सुखदायक सोय॥८४४॥
ताके न्हवन उदक परभाव। जीवन के दुख रोग नसाव॥
ता उपाय करिये रघुवीर। सुभट पठावो भारत तीर॥८४५॥
हनूमान भामंडल जवे। और सुभट संग लीने सबे॥
चढ़ि विमान सो आये तहां। भरत राय नृप सोवत जहां॥८४६॥
यत्न समेत जगावत ताय। नमस्कार करि बैठो जाय॥
राम लछन सिय चरित सुनाय। चक्रत भयो सुनत नरराय।८४७।
क्रोधवंत भरतेश्वर भयो। रण भेरी बजवावत ठयो॥
सुभग अयोध्या नगर मझार। भयो कुलाहल अचरज कार॥८४८॥
शयन करत नर नारी सबे। चक्रत बदन उठे पुनि तबे॥
चित विभ्रम मन करत विचार। क्या आयो अतिवीर्य कुमार।८४९।

अडिल्ल।

कै इक रानी निज भरतार जगावहीं। आज कुशलता नाहिं विकलता पावहीं॥ धरो आभूषण वस्त्र भूमि गृह लाय के। कांपत सकल शरीर उठावत आय के॥८५०॥ कै इक रानी पति के तन लगि कांपती। कै इक बालक रोवत तिन पुचकारती॥ कै इक

होय घावरी बावरी सी भई। चीर ओढ़न सुधि नाहिं कोठरी धसि गई ॥८५१॥ अहो विधाता बात कहा ऐसी करी। अनचिंतो दुख दियो कठिन आई घरी ॥ कै इक बरछी बाण कमान उठावते। खड़े महल के ऊपर धीरज धार ते ॥८५२॥ सेनापति रथ साजि शत्रुहन आइयो। रण के ढोल बजाय शूर सजि लाइयो॥ होत कुलाहल शब्द पूरि दश दिशि रहीं। इस प्रकार नर नारि अचंभित ह्वै रहीं ॥८५३॥

चौपाई।

तब हनुमान कहत समझाय। लंका दूरि न पहुंचो जाय ॥
उदक विसिल्या न्हवन कराय। देहु शीघ्र मति ढील कराय।८५४।
ततक्षण भरत दूत भेजियो। द्रोणमेघ ढिंग वच भाषियो ॥
क्रोधवंत ह्वै कहतो भयो। रे मूरख तूं बोरो भयो ॥८५५॥
पलटि दूत आयो निज थान। तब भरतेश गयो तिह थान ॥
अमिय समान बचन समझाय। करि प्रणाम निज कठिन स्वभाय।८५६।
एक हजार सहेली संग। चली विसिल्या कोमल अंग ॥
तब हनुमान विमान चढ़ाय। चले राम ढिंग पहुंचे जाय ॥८५७॥
ज्यों ज्यों कटक निकट चलि आय। त्यों त्यों लक्ष्मण धीर्य धराय॥
लक्ष्मण पास विसिल्या गई। ले सुगंध जल सींचत भई।८५८।
शक्ती निकसि गई तिह बार। धन्य धन्य सब करत पुकार ॥
लक्ष्मण उठो सेज जिमि सोय। कहँ रावण कहँ रावण होय।८५९।
ऐसे वचन सुनत रघुराय। छाती सों तिन लियो लगाय ॥
राम हरष को वरणन करे। सहस जीभ तें नहिं उचरे।८६०।

न्हवन त्रिसिंल्या जल अभिराम । सुभट सकल हूवे आराम ॥
यह वृत्तान्त रावण ने सुनो । और उपाय सो मन में गुनो ।८६१।
बहु रूपिणि विद्या कर अवे । साधि जीति वैरिन कों सवे ॥
फाल्गुण सुदि अष्टम दिन आय । शांतिनाथ जिन मंदिर जाय ।८६२।
अष्ट द्रव्य ले पूजा करी । त्रिभुवन पति थुति अति विस्तरी ॥
प्रमुदित बदन हुकुम तिन कियो । धर्म ध्यान सबही चित दियो ।८६३।
धर्म तनो अधिकार बुलाय । मंदोदरि कों सौंपि सुभाय ॥
आपन विद्या साधन कियो । कर माला ले ध्यान सो दियो ।८६४।
बांदर वंशी सुनि यह बात । कंपित बदन पसीना गात ॥
आप गयो पुनि करत विचार । करि उपसर्ग न सिद्धि लगार ।८६५।
हनूमान अंगद वर वीर । चले जहां लंकापति धीर ॥
करो उपसर्ग अति घनघोर । आयो मानभद्र तिह ठोर ।८६६।
क्रोधित बदन राम घर जाय । सभा मध्य बैठे रघुराय ॥
देत उलहनो यक्षाधीश । यह कह करत बड़ी अनरीत ॥८६७॥
यह अन्याय बात मत करो । लक्ष्मण गरजि बात उच्चरो ॥
तुम चोरन की मदद करोय । गरज गरज करि बचन सुनाय ।८६८।
रावण क्यों न दियो समझाय । ता पापी की पक्ष कराय ॥
इत्यादिक बहु बचन कहेय । लज्जित होय जबाब न देय ॥८६९॥
मानभद्र बोलो हरषाय । और प्रजा तें कछु न कहाय ॥
यह प्रमाण कीनो हरषाय । तब सब मतो करत उमगाय ॥८७०॥
चलो फेरि रावण ढिंग आय । नानाविधि उपसर्ग कराय ॥
रावण मेरु समान सो धीर । आई विद्या गहर गंभीर ॥८७१॥

हनूमान आदिक विलखाय । निज निज थानक पहुंचे जाय ॥
तब रावण सों विद्या कहे । सकल बात सो पौरुष लहे ॥८७२॥
राम लछन तें चले न जोर । यह मानो निश्चय मन ठोर ॥
तब रावण निज सदन मझार । गयो हरष धरि परम उदार ॥८७३॥
पटरानी मंदोदरि आय । पति सों वचन कहत समझाय ॥
अहो नाथ यह कस कस कीन । पर नारी की संगति लीन ॥८७४॥
अस बुधि कौन दई यश हीन । आपन कुलै कलंक जो दीन ॥
विष भोजन सम नारि पराई । ताहि नाथ दीजे छिटकाई ॥८७५॥
सिया पठाय राम पर देय । काम अगिन कों भस्म करेय ॥
निज सुत भ्रात छुड़ावो बंधि । राम लछन सों कीजे संधि ॥८७६॥
अब तुम तीसर पन आइयो । मुनिव्रत धरि भावन भाइयो ॥
अरी क्रूर कायर सम बैन । बोलत आवत लाज न नैन ॥८७७॥
तीन खंड की लक्ष्मी आय । मुझ चरणन में रहि लपिटाय ॥
पशू समान भूमि गोचरी । तिनकी सेव कहत बावरी ॥८७८॥
पशू समान न इनको जान । ये नारायण उपजे आन ॥
इस प्रकार विविधि समझाय । पै न तजो हठ काम बसाय ॥८७९॥
मंदोदरि कर गहि ले गयो । क्रीडा थानक पहुंचत भयो ॥
काम कला में अति लव लीन । क्रीड़ा करत भयो बुधि हीन ॥८८०॥
तब रावण रण भेरि दिवाय । आयुध शाला पहुंचो जाय ॥
मृतक छींक पूरव दिशि भई । मरण सूचना ताने दई ॥८८१॥

पद्धडी छन्द ।

रण शूर तयार भये तब हीं । निज आयुध साजि चले तब हीं ॥
कोई राव चढ़े सो विमानन में । रथ घोटक साजि चले रन में ॥८८२॥
केई शूर कहें अपनी त्रिय सों । तुम धीरज धारि रहो घर सों ॥
सजि रावण सैन चलो जबहीं । दुखदायक सगुन भये तबहीं ॥८८३॥
मय राय महा धनु हाथ लियो । श्रीराम की सैन भजाय दियो ॥
बहु रूपणि विद्या मय रथ पे । चढ़ि क्रोध भयो रण शूर तबे ॥८८४॥
सुग्रीव भमंडल आदि सबे । रण युद्ध करें अति घोर तबे ॥
श्रीराम कमान सो हाथ लियो । मय रायको आयके बांधि लियो ।८८५।

चौपाई ।

तब रावण ह्वै काल समान । आयो रथ चढ़ि छोड़त बान ॥
आवत लक्ष्मण सन्मुख जबै । भिड़े शूर दोनों पुनि तबै ॥८८६॥
रे तस्कर मुझ सन्मुख आय । सिया हरण फल देहुं दिखाय ॥
तब रावण इम बैन सुनेय । अरे नीच किम भाषत एय ॥८८७॥
क्षुद्र भिखारी वनचर क्रूर । बांदर वंशिन संग भयो शूर ॥
अरे रंक तैं प्राण बचाय । भागि भागि किम प्राण गमाय ॥८८८॥
तब लक्ष्मण बोले सुनि बैन । काल दूत तुझ आयो लैन ॥
इम कहि बाण कमान लगाय । घेरि लियो रावण कों आय ॥८८९॥
दोनों धीर वीर रण माय । भिरे परस्पर क्रोध धराय ॥
नाना विधि सामानिक शस्त्र । होत भयो रण घोर प्रशस्त ॥८९०॥
ये दोनों अति बल के धनी । शूरन में सह शूर सो गनी ॥
पुनि हथियार देव मय लिये । मार मार आपस में किये ॥८९१॥
तब रावण विद्या बहु रूप । करे अनेक रूप भय कूप ॥
लक्ष्मण सकल शीस छेदियो । रावण कों बल हीनो कियो ॥८९२॥
तब रावण मन चक्र चितार । नाम सुदर्शन अति भयकार ॥
तब ही बलि मूसल कर लियो । भ्रात रक्ष की मनशा कियो ॥८९३॥
हनूमान सुग्रीव सो आय । भामंडल नल नील सो धाय ॥
आय विभीषण बल अति धारि । निज२ आयुध लिये सम्हारि ।८९४।
दशमुख चक्र चलावत भयो । राम भ्रात ढिग आवत भयो ॥
तीन प्रदक्षिणा दे करि सोय । लक्ष्मण हाथ विराजो जोय ॥८९५॥
शिष्य गुरुन की विनय कराय । त्यों यह चक्र भयो दुखदाय ॥
देवन जय जयकार सो कियो । हरषित पुष्पांजलि क्षेपियो ॥८९६॥
धर्म सरोवर जो ढिंग होय । भव आताप मिटावे सोय ॥
जगत पूज्य जिन धर्म स्वरूप । यह विन और अँधेरो कूप ॥८९७॥

दोहा ।

तब रावण मन चिंतियो, पाप उदय भयो आय ।
अनचिंतो दुख ऊपजो, सो दुख कह्यो न जाय ॥८९८॥
काल लब्धि के योग करि, हरी पराई नारि ।
हे विधना अब क्या करों, शोच समुद में डारि ॥८९९॥

अडिल्ल।

तावत लक्ष्मण वैन अमिय सम उच्चरे। कहत भयो हितदाये सुनो तुम खेचरे॥ अजहूं नाहिं बिगार तिहारो कछु भयो। सिया राम कों सौंपि आय मस्तक नयो॥९००॥

चौपाई।

अरे रंक कौडी कों पाय। ता करि आप धनी ह्वै जाय॥
जैसे रंक उदर भरि खाय। आप गिने मैं चक्री भाय॥ ९०१॥
घर घर चक्र कुलालन होय। तो क्या चक्रिवर्त पद होय॥
त्यों अभिमान धरे रे नीच। हम जानी तुझ आई मीच॥९०२॥
तव नारायण लक्ष्मण वीर। चक्र चलायो प्रतिहरि तीर॥
काल समान भयंकर भयो। रावण उर कों भेदत भयो॥९०३॥
वज्रपात सम रथ तें गिरो। हा हा कार कटक में परो॥
भागी सैन न धीर्य धरेय। अरे विधाता कहा करेय॥९०४॥
ह्वै दयालु श्री रघुवर राय। सकल सुभट जन कों सुखदाय॥
रण वर्जित करि रुधिर शरीर। भये सकल योधा रणधीर॥९०५॥
देखि विभीषण भ्रात कि ओर। गिरो धरनि में खाय पिछोर॥
उठि त्रिशूल कर उदर लगाय। तव कर पकरि राम लियो आय।९०६।
भामंडल आदिक नृप जेय। सम्बोधन के वचन कहेय॥
मोह पटल करि ग्रसित शरीर। निर्विष कियो ताहि रघुवीर।९०७।

अडिल्ल।

यह वृतान्त सुनि सकल त्रिया दशमुख तनी। भई विकलता रूप मोह मद की सनी॥डग मगाय गिर परत चलत इत आय के। रावण मृतक शरीर देखि दुखदाय के।९०८। आवत नारी दशमुख ऊपर गिर परीं। हा हा करत पुकार नयन जल सों भरी॥केई इक नारी मूर्छा खाय पछार सो। गिरी धरनि में जाय भई वेहाल सो।९०९। केई इक नारी पति कों गोद उठाय के। मुख चुम्बन करि वोली वैन उचार के॥ अहो नाथ क्या पीछे रणमें आयके। सूनी सेज हमारी गे छिटकाय के।९१०। केई इक नारी पतिके पांय पलोटती। कंकण माल उतारि वदन कों कूटती॥ केई इक नारी कूप गिरन कों धाइयो। तिन्हें सखी जन पकरि गोद वैठाइयो॥९११॥ यह प्रकार लखि राम निकट तिन आय

के। संबोधन के बचन कहे समझाय के॥ करि विचार रघुराय दग्ध इन कीजिये। चंदन अगर कपूर धूप सब लीजिये।९१२। इन्द्रजीत कों आदि सनेही तासुके। बंधन तिनके तोरि लिये बुलदायके॥ दग्ध भयो दशमुख कों कुटुम निहारि के। मोह ग्रसित सब जीव रहे पछिताय के।९१३। इन्द्रजीत की ओर सियापति देखिके। मधुर २ बच भाषे करुणा पेखि के॥ अहो दशानन पुत्र राज्य करिये भिया। हमें सिया सों काम जाय वन वासिया।९१४। अहो राम हम राज्य तने फल पाइयो। भूलि रहे संसार सो अब न बँधाइयो॥ ता अवसर श्री नंत वीर जिन आइयो। नगर बाह्य चौसंघ युक्त अधिकाइयो।९१५।

चौपाई।

चार घातिया कर्म खिपाय। केवल ज्ञान भानु प्रगटाय॥
सकल भव्य जन पूजन काज। चले हरष युत सहित समाज॥९१६॥
जय जय कार शब्द उच्चरी। अष्ट द्रव्य सों पूजन करी॥
इन्द्रजीत और मेघ कुमार। कुंभकरण आदिक नृप सार॥९१७॥
अरु मय आदि राय सो तहां। दीक्षा धारि भये मुनि महां॥
केई इक श्रावक व्रत तहँ लियो। केई इक सम्यक धारण कियो।९१८।
अरु मंदोदरि आदिक नारि। भईं आर्यिका मोह विदारि॥
चन्द्रनखा दीक्षा कों धारि। भईं आर्यिका मोह विदारि॥९१९॥
तब श्री राम लछन दोऊ वीर। आये जनक सुता के तीर॥
देखि राम सिय हरषित हियो। परम प्रीति करि दुख भाजियो।९२०।
श्री जिन धर्म तने परभाव। आनंद मंगल होत वधाव॥
शील रतन कों यतन समेत। राखो सिया परम सुख हेत॥९२१॥
जो नर नारि शील कों धरे। निश्चय मुक्ति रमा कों वरे॥
शीलवंत के किंकर देव। आय करें नित चरणन सेव॥९२२॥

दोहा।

नरक तीसरे माहिं जो, रावण पहुंचो जाय।
ता के दुख वरणन करत, कौन कवीश्वर आय॥९२३॥
ऐसो भविजन जान करि, त्याग पराई नार।
सम्यक दृढ़ व्रत राखि के, स्वर्ग मोक्ष सुखकार॥९२४॥

॥ समाप्तम्॥

समर्पण ।

श्रीमान् जैनधर्म भूषण, धर्म दिवाकर, पूज्य
ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद जी !

इटावा में सम्वत् १९८१ में जब आपका चतुर्मास हुआ और आपने शास्त्रसभा में स्व० कवि मनरंगलाल जी कृत "सप्त व्यसन चरित्र" बांचा। उसके अन्त में जो परस्त्री व्यसन निषेधात्मक कथा का प्रसंग आया तो आपने अत्यन्त आग्रह पूर्वक यह इच्छा प्रगट की कि इतना अंश संक्षिप्त जैन रामायण के नाम से मुद्रित करा दिया जाय। तदनुसार वह आज मुद्रित होकर प्रस्तुत है और आपकी यह प्यारी वस्तु आपको समर्पित है। आशा है कि आप इस तुच्छ भेंट को प्रसन्नता पूर्वक ग्रहण करेंगे।

भवदीय इच्छानुकूल प्रवर्तक:—
चन्द्रसेन.